॥ श्रीहरिः ॥

वीर बालक

गीताप्रेस, गोरखपुर

मुद्रक तथा प्रकाशक
घनश्यामदास जालान
गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० २०११ तीन बारमें ३०,०००
सं० २०१२ चौथी बार १०,०००
कुल ४०,०००

मूल्य ।) चार आना

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

ॐ

निवेदन

'कल्याण' के 'बालक-अङ्क' में प्रकाशित २० वीर बालकों-के छोटे-छोटे सचित्र चरित इस पुस्तिकामें बालकोंके लिये ही प्रकाशित किये गये हैं, जिन-जिन पुस्तकोंके आधारपर चरित लिखे गये हैं, उन-उनके लेखकोंके हम हृदयसे कृतज्ञ हैं।

हनुमानप्रसाद पोद्दार

श्रीहरिः

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ-संख्या

१–वीर बालक लव-कुश ५
२–वीर राजकुमार कुवलयाश्व १७
३–वीर असुरबालक बर्बरीक २०
४–वीर बालक अभिमन्यु ३१
५–वीर बालक भरत ३७
६–वीर बालक स्कन्दगुप्त ३९
७–वीर बालक चण्ड ४२
८–प्रणवीर बालक प्रताप ४७
९–वीर बालक बादल ५०
१०–वीर बालक प्रताप ५३
११–वीर बालक रामसिंह ५७
१२–वीर निर्भीक बालक शिवाजी ६०
१३–वीर बालक छत्रसाल ६५
१४–वीर बालक दुर्गादास राठौर ६९
१५–वीर बालक पुत्त ७२
१६–वीर बालक अजीतसिंह और जुझारसिंह ... ७५
१७–वीर बालक पृथ्वीसिंह ७७
१८–वीर बालक जालिमसिंह ८०
१९–वीर बालक जेरापुर-नरेश ८५

श्रीहरिः

वीर बालक लव-कुश

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामने मर्यादाकी रक्षाके लिये पतिव्रताशिरोमणि श्रीजानकीजीका त्याग कर दिया। श्रीराम और जानकी परस्पर अभिन्न हैं। वे दोनों सदा एक हैं। उनका यह अलग होना और मिलना तो एक लीलामात्र है। भगवान् श्रीरामने अपने यशकी रक्षाके लोभसे, अपयशके भयसे या किसी कठोरतावश श्रीजानकीजीका त्याग नहीं किया था। वे जानते थे कि श्रीसीता सम्पूर्णरूपसे निर्दोष हैं। श्रीसीताजीके वियोगमें उन्हें कम दुःख नहीं होता था। यदि सीता-त्यागमें कोई कठोरता है तो वह जितनी सीताजीके प्रति है, उतनी ही या उससे भी अधिक श्रीरामकी अपने प्रति भी है; लेकिन भगवान्‌का अवतार संसारमें मर्यादाकी स्थापनाके लिये हुआ था। यदि आदर्श पुरुष अपने आचरणमें साधारण ढील भी

रहने दें तो दूसरे लोग उनका उदाहरण लेकर बड़े-बड़े दोष करने लगते हैं। विवश होकर पवित्रतासे श्रीसीताजीको लंकामें रावणके यहाँ वन्दिनी बनकर अशोकवाटिकामें रहना पड़ा था। अब कुछ लोग इसी बातको लेकर अनेक प्रकारकी बातें कहने लगे थे। 'कहीं इसी बातको लेकर स्त्रियाँ अपने अनाचारका समर्थन न करने लगें और पुरुष भी आचरण बिगाड़ न लें।' यह सोचकर मर्यादापुरुषोत्तमको अपने ही प्रति यह भीषण कठोरता करनी पड़ी। उन्हें शासकोंके सामने भी यह आदर्श रखना था कि प्रजाके आदर्शकी रक्षाके लिये शासकको कहाँतक व्यक्तिगत त्याग करनेको तैयार रहना चाहिये।

भगवान् श्रीरामकी आज्ञासे विवश होकर लक्ष्मणजी श्रीजानकीको वनमें महर्षि वाल्मीकिके आश्रमके समीप उस समय छोड़ आये, जब श्रीसीताजी गर्भवती थीं। वाल्मीकिजी वहाँसे श्रीजानकीजीको अपने आश्रममें ले गये और वहीं एक साथ यमजरूपमें लव-कुशका जन्म हुआ। आश्रममें महर्षिने ही दोनों बालकोंके सब संस्कार कराये और महर्षिने ही उनको समस्त शास्त्रों तथा अस्त्र-शस्त्रकी भी शिक्षा दी। इसके अतिरिक्त महर्षिने 'अपने वाल्मीकीय रामायण' का गान भी उनको सिखाया। सात काण्ड और पाँच सौ सर्गवाले इस चौबीस हजार श्लोकोंमें बने हुए श्रीरामचरितको जब दोनों कुमार अपने कोमल, सुमधुर स्वरमें संगीत-शास्त्रके अनुसार गान करने लगते थे, तब श्रोता मुग्ध हो जाते थे।

उधर अयोध्यामें भगवान् श्रीरामने अश्वमेध-यज्ञकी दीक्षा ली। विधिपूर्वक पूजा करके श्यामकर्ण अश्व छोड़ा गया। बड़ी भारी सेनाके साथ राजकुमार पुष्कल तथा सेनापति कालजित्के साथ शत्रुघ्नजी उस अश्वकी रक्षामें चले। श्रीहनुमान्जी तथा वानरराज सुग्रीव भी वानर एवं रीछोंकी सेना लेकर शत्रुघ्नजीके साथ चल रहे थे। वह अश्व अपने मनसे जहाँ चाहता था, वहाँ जाता था। सेना उससे कुछ पीछे रहकर चलती थी, जिसमें घोड़ेको कोई असुविधा न हो। अनेक नरेशोंने स्वयं शत्रुघ्नजीको 'कर' दिया, कुछने समझाने-बुझानेपर कर देना स्वीकार कर लिया। कहीं-कहीं संग्राम भी करना पड़ा। इस प्रकार सर्वत्र विजय करते हुए वह यज्ञका अश्व घूमता हुआ महर्षि वाल्मीकिके तपोवनके पास वनमें पहुँचा।

कुमार लव उस समय मुनिकुमारोंके साथ वनमें खेल रहे थे। मणिजटित स्वर्णके आभूषणोंसे सजे उस परम सुन्दर घोड़ेको देखकर सब बालक उसके समीप आ गये। बड़े स्पष्ट तथा सुन्दर अक्षरोंमें लिखा हुआ एक घोषणापत्र अश्वके मस्तकपर बँधा था। उस घोषणापत्रमें बताया गया था कि 'यह अयोध्याके चक्रवर्ती सम्राट् महाराज श्रीरामके यज्ञका अश्व है और परम पराक्रमी शत्रुघ्नकुमार इसकी रक्षा कर रहे हैं। जिस देशसे अश्व निकल जायगा, वह देश जीता हुआ समझा जायगा। जिस किसी क्षत्रियमें साहस हो और जो अयोध्याके महाराजको अपना सम्राट् न मानना चाहे, वह अश्वको पकड़े

और युद्ध करे।' इस घोषणापत्रको पढ़कर लवको क्रोध आ गया। उन्होंने घोड़ेको पकड़कर एक वृक्षमें बाँध दिया और स्वयं धनुष चढ़ाकर युद्धके लिये खड़े हो गये। साथके मुनिबालकोंने पहले तो उन्हें रोकनेका प्रयत्न किया, किंतु जब वे न माने तब युद्ध देखनेके लिये वे सब कुछ दूर खड़े हो गये।

घोड़ेके साथ चलनेवाले रक्षकोंने देखा कि एक बालकने अश्वको बाँध दिया है। उनके पूछनेपर लवने कहा—'मैंने इस घोड़ेको बाँधा है। जो इसे खोलनेका प्रयत्न करेगा उसपर मेरे भाई कुश अवश्य क्रोध करेंगे। रक्षकोंने समझा कि यह बालक तो यों ही बचपनकी बातें करता है। वे घोड़ेको खोलनेके लिये आगे बढ़े। लवने देखा कि ये लोग मेरा कहना नहीं मानते तो बाण मारकर उन सबकी भुजाएँ उन्होंने काट दीं। बेचारे रक्षक वहाँसे भागे और उन्होंने शत्रुघ्नजीको अश्वके बाँधे जानेकी सूचना दी।

अपने सैनिकोंकी कटी भुजाएँ देखकर और उनकी बातें सुनकर शत्रुघ्नजी समझ गये कि अश्वको बाँधनेवाला बालक कोई साधारण बालक नहीं है। सेनापतिको उन्होंने व्यूह-निर्माणकी आज्ञा दी। सम्पूर्ण सेना दुर्भेद्य व्यूहके रूपमें खड़ी की गयी और तब सेनाके साथ सब लोग, जहाँ अश्व बँधा था; वहाँ आये। एक छोटे-से सुकुमार बालकको धनुष चढ़ाये सम्मुख खड़े देखकर सेनापतिने समझानेका प्रयत्न किया। लवने कहा—'तुम युद्धसे डरते हो तो लौट जाओ! मैं तुम्हें छोड़े

देता हूँ। इस अश्वके स्वामी श्रीरामसे जाकर कहो कि लवने उनका घोड़ा बाँध लिया है।' अन्ततः वहाँ युद्ध प्रारम्भ हो गया। लवके बाणोंकी वर्षासे सेनामें भगदड़ पड़ गयी। हाथी, घोड़े और सैनिक कट-कटकर गिरने लगे। सेनापति कालजित्‌ने पूरे पराक्रमसे युद्ध किया, किंतु लवने उसके सब अस्त्र-शस्त्र खेल-खेलमें काट डाले और फिर उसकी दोनों भुजाएँ और मस्तक भी काट गिराया।

पहले तो शत्रुघ्नजीको अपने सैनिकोंद्वारा मिले इस समाचारपर विश्वास ही नहीं होता था कि कोई यमराजके लिये भी दुर्धर्ष सेनापतिको मार सकता है। अन्तमें पूरी बातें सुनकर और मन्त्रीसे सलाह लेकर वे स्वयं सम्पूर्ण सेनाके साथ युद्धक्षेत्रमें आ गये। बड़ी भारी सेनाने लवको चारों ओरसे घेर लिया। लवने जब देखा कि मैं शत्रुओंसे घिर गया हूँ, तब अपने बाणोंसे उन सैनिकोंको छिन्न-भिन्न करने लगे। सैनिकोंको भागते देख पुष्कल आगे बढ़े। थोड़ी ही देरके संग्राममें लवके बाणने पुष्कलको मूर्छित कर दिया। पुष्कलके मूर्छित होनेपर क्रोध करके स्वयं हनुमान्‌जी लवसे युद्ध करने आये। उन्होंने लवपर पत्थरों तथा वृक्षोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी; किंतु लवने उन सबके टुकड़े उड़ा दिये। क्रोधमें भरकर हनुमान्‌जीने लवको अपनी पूँछमें लपेट लिया। इस समय लवने अपनी माताका स्मरण करके उनकी पूँछपर एक घूँसा मारा। इस घूँसेकी चोटसे हनुमान्‌जीको बहुत पीड़ा हुई। लवको

उन्होंने छोड़ दिया। अब लवने उनको इतने बाण मारे कि वे भी मूर्छित हो गये। इसके पश्चात् शत्रुघ्नजी युद्ध करने आये। घोर संग्रामके पश्चात् लवने बाण मारकर शत्रुघ्नजीको भी मूर्छित कर दिया। शत्रुघ्नको मूर्छित देखकर सुरथ आदि नरेश लवपर टूट पड़े। अकेले बालक लव बहुत बड़े-बड़े अनेकों महारथियोंसे संग्राम कर रहे थे। शत्रुघ्नजीकी भी मूर्छा कुछ देरमें दूर हो गयी। अब इस बार शत्रुघ्नजीने भगवान् श्रीरामका दिया वह बाण धनुषपर चढ़ाया, जिससे उन्होंने लवणासुरको मारा था। उस तेजोमय बाणके छातीमें लगनेसे लव मूर्छित होकर गिर पड़े। मूर्छित लवको रथपर रखकर शत्रुघ्नजी अयोध्या ले जानेका विचार करने लगे।

कुछ मुनिकुमार दूर खड़े युद्ध देख रहे थे, उन्होंने दौड़कर महर्षि वाल्मीकिके आश्रममें श्रीजानकीजीको समाचार दिया— 'माँ! तुम्हारे छोटे बेटेने किसी राजाके घोड़ेको बाँध दिया था। उस राजाके सैनिकोंने उससे युद्ध किया। अब लव मूर्छित हो गया है और वे लोग उसे पकड़कर ले जाना चाहते हैं।' बालकोंकी बातें सुनकर माता जानकी दुखित हो गयीं। उनके नेत्रोंसे आँसू गिरने लगे। उसी समय वहाँ कुमार कुश आये। उन्होंने मातासे तथा मुनिकुमारोंसे पूछकर सब बातें जान लीं। अपने भाईको मूर्छित हुआ सुनकर वे क्रोधमें भर गये। माताके चरणोंमें प्रणाम करके उन्होंने आज्ञा ली और धनुष चढ़ाकर युद्धभूमिकी ओर दौड़ पड़े।

लव उस समय रथपर पड़े थे; किंतु उनकी मूर्छा दूर हो गयी थी। दूरसे ही अपने भाईको आते उन्होंने देख लिया और वे कूदकर रथसे नीचे आ गये। अब कुशने पूर्वकी ओरसे रणभूमिमें खड़े योद्धाओंको मारना प्रारम्भ किया और लवने पश्चिमसे। क्रोधमें भरे दोनों बालकोंकी मारसे वहाँ युद्धभूमि लाशोंसे पट गयी। बड़े-बड़े योद्धा भागकर प्राण बचानेका प्रयत्न करने लगे। जो भी युद्ध करने आता, उसका शरीर कुछ क्षणोंमें बाणोंसे छलनी हो जाता था। हनुमान्‌जी और अंगदको बाण मार-मारकर लव तथा कुश बार-बार आकाशमें फेंकने लगे। जब ये दोनों आकाशसे भूमिपर गिरने लगते, तब फिर बाण मारकर लव-कुश इन्हें ऊपर उछाल देते। इस प्रकार गेंदकी भाँति उछलते-उछलते इन्हें बड़ी पीड़ा हुई और जब कृपा करके दोनों कुमारोंने इनपर बाण चलाना बंद कर दिया, तब ये पृथ्वीपर गिरकर मूर्छित हो गये। कुशने शत्रुघ्नजीको भी मूर्छित कर दिया बाण मारकर। महावीर सुरथ कुशके बाणोंके आघातसे भूमिपर पड़ गये और वानरराज सुग्रीवको कुशने वारुण पाशसे बाँध लिया। इस प्रकार कुशने युद्धभूमिमें विजय प्राप्त की।*

---

* श्रीरामीय अश्वमेधपुराणमें ऐसा वर्णन है कि शत्रुघ्नके मूर्छित होनेपर अयोध्या समाचार गया और वहाँसे लक्ष्मणजी सेना लेकर आये। लक्ष्मणजीके मूर्छित होनेपर भरतजी तथा अन्तमें स्वयं भगवान् श्रीराम युद्धमें पधारे। भगवान्‌ने युद्ध नहीं किया। उन्होंने अपने ही पुत्रोंपर शस्त्र चलाना उचित नहीं समझा। सेनाको युद्धके लिये भेजकर वे स्वयं रथपर सो गये। लव-कुशने

विजयके पश्चात् लवने कहा—'भैया! तुम्हारी कृपासे मैं इस समर-सागरके पार हुआ। अब इस युद्धकी स्मृतिके लिये हम कोई उत्तम चिह्न ले चलें।' दोनों भाई पहले शत्रुघ्नके समीप गये और वहाँ उनके मुकुटमें जड़ी हुई बहुमूल्य मणि उन्होंने निकाल ली। इसके पश्चात् लवने पुष्कलका किरीट उतार लिया। दोनों भाइयोंने उनकी भुजाओंमें पड़े मूल्यवान् गहने तथा अस्त्र-शस्त्र भी ले लिये। अब लवने कहा—'भैया! मैं इन दोनों बड़े बंदरोंको भी ले चलूँगा। इनको देखकर हमारी माता हँसेगी, मुनिकुमार प्रसन्न होंगे और मेरा भी मनोरञ्जन होगा।' इतना कहकर दोनों भाइयोंमेंसे एक-एकने सुग्रीव तथा हनुमान्‌जीकी पूँछ पकड़ी और उन्हें पूँछ पकड़कर उठाये हुए वे आश्रमकी ओर चल पड़े।

अपने पुत्रोंको दूरसे ही आते देख माता जानकीको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे तो द्वारपर खड़ी इनके सकुशल लौटनेकी प्रतीक्षा ही कर रही थीं। जब उन्होंने देखा कि उनके कुमार दो वानरोंको पूँछ पकड़कर लिये आ रहे हैं, तब उन्हें हँसी आ गयी; लेकिन वानरोंको पहचानते ही उन्होंने कहा—'तुम दोनोंने इन्हें क्यों पकड़ा है? छोड़ो। शीघ्र इनको छोड़ दो। ये लंकाको भस्म करनेवाले महावीर हनुमान् हैं और ये वानरराज सुग्रीव हैं। तुमने इनका अनादर क्यों किया?'

समझा कि युद्धमें किसी बाणके लगनेसे वे मूर्छित हो गये हैं। कल्पभेदसे यह कथा भी ठीक ही है।

लव-कुशने सरलभावसे युद्धका कारण तथा परिणाम बता

दिया। माता जानकीने कहा—'पुत्रो! तुम दोनोंने बड़ा अन्याय किया है। वह तो तुम्हारे पिताका ही अश्व है। उसे शीघ्र छोड़ दो और इन वानरोंको भी छोड़ दो।'

माताकी बात सुनकर लव-कुशने कहा—'माताजी! हमने तो क्षत्रिय-धर्मके अनुसार ही घोड़ेको बाँधा था और युद्ध करनेवाले लोगोंको हराया था। महर्षि वाल्मीकिने हमें यही पढ़ाया है कि धर्मपूर्वक युद्ध करनेवाला क्षत्रिय पापका भागी नहीं होता। अब आपकी आज्ञासे हम इन वानरोंको तथा अश्वको भी छोड़ देते हैं।'

श्रीजानकीजीने संकल्प किया—'यदि मैंने मनसे भी भगवान् श्रीरामको छोड़कर कभी किसी पुरुषका चिन्तन न किया हो, यदि मेरा चित्त धर्ममें अविचल भावसे स्थिर रहा हो तो युद्धमें घायल, मूर्छित तथा मारे गये सब लोग पुनः स्वस्थ एवं जीवित हो जायँ।'

इधर श्रीजानकीजीके मुखसे ये शब्द निकले और उधर युद्धभूमिमें सब लोग निद्रासे जगे हुएके समान उठ बैठे। उनके कटे हुए अङ्ग भी जुड़ गये थे। किसीके शरीरपर चोटका कोई चिह्न नहीं था। शत्रुघ्नजीने देखा कि उनके मुकुटकी मणि नहीं है। पुष्कलको अपना किरीट, गहने तथा अस्त्र-शस्त्र नहीं मिले। यज्ञीय अश्व सामने खड़ा था। उसे लेकर ये सब लोग अयोध्या लौट आये और वहाँ सब बातें उन्होंने भगवान् श्रीरामको सुनायीं।

अश्वके आ जानेपर यज्ञका प्रारम्भ हुआ। दूर-दूरसे ऋषि-गण अपने शिष्योंके साथ अयोध्या पधारे। महर्षि वाल्मीकि भी लव-कुश तथा अपने अन्य शिष्योंके साथ आये और सरयूके किनारे नगरसे कुछ दूर सबके साथ ठहरे। महर्षिके आदेशसे लव-कुश मुनियोंके आश्रमोंमें, राजाओंके शिविरोंमें तथा नगरकी गलियोंमें रामायणका गान करते हुए घूमा करते थे। उनके स्पष्ट, मधुर एवं मनोहर गानको सुनकर लोगोंकी भीड़ उनके साथ लगी रहती थी। सर्वत्र उन दोनोंके गानकी ही चर्चा होने लगी। एक दिन भरतजीके साथ श्रीरामने भी राजभवनपर ऊपरसे इन दोनों बालकोंका गान सुना। आदरपूर्वक दोनोंको भीतर बुला-कर सम्मानित किया गया और वहाँ उनका गान सुना गया। अठारह सहस्र स्वर्णमुद्राएँ पुरस्कारस्वरूपमें उन्हें भगवान् रामने देना चाहा; किंतु लव-कुशने कुछ भी लेना अस्वीकार कर दिया। लव-कुशके कहनेसे यज्ञकार्यसे बचे समयमें रामायण-गानके लिये एक समय निश्चित कर दिया गया। उस समय समस्त प्रजाजन, आगत नरेश, ऋषिगण तथा वानरादि रामायणका वह अद्भुत गान सुनते थे। कई दिनोंमें पूरा रामचरित्र सुननेसे सबको ज्ञात हो गया कि ये दोनों बालक श्रीजनककुमारी सीताके ही पुत्र हैं।

मर्यादापुरुषोत्तमने श्रीजानकीजीको सब लोगोंके सम्मुख सभामें आकर अपनी शुद्धता प्रमाणित करनेके लिये शपथ लेनेको कहकर बुलवाया। वे जगज्जननी माता जानकी वहाँ

आयीं और उन्होंने शपथके रूपमें कहा—'यदि मैं सब प्रकारसे पवित्र हूँ तो पृथ्वीदेवी मुझे अपने भीतर स्थान दें। पृथ्वी बड़े भारी शब्दके साथ फट गयीं। स्वयं भूदेवी रत्नसिंहासन लिये प्रकट हुईं और उसपर बैठाकर वे श्रीसीताजीको ले गयीं। फटी हुई पृथ्वी फिर बराबर हो गयी। अब इसके पश्चात् कहनेको कुछ नहीं रह जाता। लव-कुशको जन्मसे पिता नहीं मिले थे और जब पिता मिले, तब उनकी स्नेहमयी माता नहीं रहीं। अयोध्याके युवराज होनेका सुख भला उन्हें क्या सुखी कर सकता था।

वीर राजकुमार कुवलयाश्व

परम पराक्रमी राजा शत्रुजित्के पास एक दिन महर्षि गालव आये। महर्षि अपने साथ एक दिव्य अश्व भी ले आये थे। राजाने महर्षिका विधिवत् पूजन किया। महर्षिने बताया—'एक दुष्ट राक्षस अपनी मायासे सिंह, व्याघ्र, हाथी आदि वन-पशुओंका रूप धारण करके आश्रममें बार-बार आता है और आश्रमको नष्ट-भ्रष्ट कर जाता है। यद्यपि उसे क्रोध करके भस्म किया जा सकता है, पर ऐसा करनेसे तो तपस्याका नाश ही हो जायगा। हमलोग बड़े कष्टसे जो तप करते हैं उसके पुण्यको नाश नहीं करना चाहते। हमारे क्लेशको देखकर इस 'कुवलय' नामक घोड़ेको सूर्यदेवने हमारे पास भेजा है। यह विना थके पूरी पृथ्वीकी प्रदक्षिणा कर सकता है और आकाश, पाताल एवं जलमें सर्वत्र इसकी गति है। देवताओंने यह भी कहा है कि इस अश्वपर बैठकर आपके पुत्र ऋतध्वज उस असुरका वध करेंगे। अतएव आप अपने राजकुमारको हमारे साथ भेज दें। इस अश्वको पाकर वे कुवलयाश्व नामसे संसारमें प्रसिद्ध होंगे।'

धर्मात्मा राजाने मुनिकी आज्ञा मानकर राजकुमारको मुनिके साथ जानेकी आज्ञा दी। राजकुमार मुनिके साथ जाकर उनके आश्रममें निवास करने लगे। एक दिन जब मुनिगण

संध्योपासनामें लगे हुए थे, तब शूकरका रूप धारण करके वह नीच दानव मुनियोंको सताने वहाँ आ पहुँचा । उसे देखते ही वहाँ रहनेवाले मुनियोंके शिष्य हल्ला करने लगे । राजकुमार ऋतध्वज शीघ्र ही घोड़ेपर सवार होकर उसके पीछे दौड़े । धनुषको खींचकर एक अर्धचन्द्राकार बाणसे उन्होंने असुरको बींध दिया । बाणसे घायल होकर असुर प्राण बचानेके लिये

भागा । राजकुमार भी उसके पीछे घोड़ेपर लगे रहे । वनों, पर्वतों, झाड़ियोंमें जहाँ वह गया राजकुमारके घोड़ेने उसका पीछा किया । अन्तमें बड़े वेगसे दौड़ता हुआ वह राक्षस पृथ्वीके एक गड्ढेमें कूद पड़ा । राजकुमारने भी उस गड्ढेमें घोड़ा कुँदा दिया । वह पाताललोकमें पहुँचनेका मार्ग था । उस अन्धकारपूर्ण मार्गसे राजकुमार पाताल पहुँच गये । स्वर्गके समान सुन्दर पातालमें पहुँचकर उन्होंने घोड़ेको एक स्थानपर बाँध दिया और वे एक भवनमें गये । वहाँ उन्हें विश्वावसु

नामक गन्धर्वराजकी कन्या मदालसा मिली। दानव वज्रकेतुके दुष्ट पुत्र पातालकेतुने उसे स्वर्गसे हरण किया था और यहाँ लाकर रक्खे हुए था। वह असुर इससे विवाह करना चाहता था। जब मदालसाको पता लगा कि उस असुर पातालकेतुको राजकुमारने अपने बाणसे छेद डाला है, तब उसने ऋतध्वजको ही अपना पति वरण कर लिया।

राजकुमार ऋतध्वजने जब मदालसासे विवाह कर लिया तब इस बातका समाचार पाकर पातालकेतु अपने अनुयायी दानवोंके साथ क्रोधमें भरा वहाँ आया। असुरोंने राजकुमारपर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी, लेकिन हँसते हुए राजकुमारने उनके सब अस्त्र-शस्त्र अपने बाणोंसे काट डाले। त्वाष्ट्र नामके दिव्यास्त्रका प्रयोग करके उन्होंने सभी दानवोंको एक क्षणमें नष्ट कर दिया। जैसे महर्षि कपिलकी क्रोधाग्निसे सगरके साठ हजार पुत्र भस्म हो गये थे, वैसे ही उस दिव्यास्त्रकी ज्वालामें दानव भस्म हो गये।

पत्नीके साथ राजकुमार उस अश्वपर चढ़कर पातालसे ऊपर आ गये। अपने विजयी पुत्रको आया देखकर उनके पिताको बड़ा हर्ष हुआ। समय आनेपर राजकुमार ऋतध्वज—कुवलयाश्व नरेश हुए। उनकी पत्नी मदालसा परम तत्त्वको जाननेवाली थी। उन्होंने ही अपने पुत्रोंको गोदमें लोरी देते-देते ही ब्रह्मज्ञानका उपदेश किया था।

वीर असुरबालक बर्बरीक

महावीर पाण्डुनन्दन भीमसेनने हिडिम्बा राक्षसीसे विवाह किया था और उससे घटोत्कच नामक अतुल पराक्रमी पुत्र उनके हुआ था। घटोत्कचने भगवान् श्रीकृष्णके आदेशसे भौमासुरके नगरपाल मुर दानवकी परम सुन्दरी कन्या कामकटंकटासे विवाह किया। घटोत्कचको मुर-कन्यासे बर्बरीक नामक पुत्रकी प्राप्ति हुई। राक्षसियाँ गर्भ धारण करते ही पुत्र प्रसव करती हैं और उनके बालक जन्मते ही युवक एवं बलवान्

हो जाते हैं। बालक बर्बरीक जन्मसे ही विनयी, धर्मात्मा एवं वीर था। उसे साथ लेकर घटोत्कच द्वारका गया और वहाँ उसने भगवान् श्रीकृष्णके चरणोंमें पुत्रके साथ प्रणाम किया। हाथ जोड़कर बर्बरीकने भगवान्से प्रार्थना की—'आदिदेव माधव! मैं मन, बुद्धि और चित्तकी एकाग्रतासे आपको प्रणाम करता हूँ। पुरुषोत्तम! संसारमें जीवका कल्याण किस प्रकार होता है? कोई धर्मको कल्याणकारी बतलाते हैं, कोई दानको, कोई तपको, कोई धनको, कोई भोगोंको तथा कोई मोक्षको। प्रभो! इन सैकड़ों श्रेयोंमेंसे एक निश्चित श्रेय जो मेरे कुलके लिये हो, उसका आप मुझे उपदेश करें।'

भगवान्ने कहा—'बेटा! जो जिस कुलमें एवं वर्णमें उत्पन्न हुआ है, उसके कल्याणका साधन उसीके अनुरूप होता है। ब्राह्मणके लिये तप, इन्द्रिय-संयम तथा स्वाध्याय कल्याणकारी है। क्षत्रियके लिये प्रथम बल साध्य है; क्योंकि बलके द्वारा दुष्टोंका दमन एवं साधुओंका रक्षण करनेसे उसका कल्याण होता है। वैश्य पशु-पालन, कृषि तथा व्यापारसे धन एकत्र करके दान करनेसे कल्याण-भाजन होता है। शूद्र तीनों वर्णों-की सेवा करके श्रेयका भागी बनता है। तुम क्षत्रियकुलमें उत्पन्न हुए हो अतएव पहले तुम अतुलनीय बलकी प्राप्तिका उद्योग करो। भगवती शक्तिकी कृपासे ही बलकी प्राप्ति होती है, अतः तुम्हें शक्तिरूपा देवियोंकी आराधना करनी चाहिये।

बर्बरीकके पूछनेपर भगवान्ने उसे महीसागर-संगम तीर्थमें

जाकर देवर्षि नारदद्वारा वहाँ लायी गयी नवदुर्गाओंकी आराधनाका आदेश दिया। तदनन्तर तीन वर्षतक आराधना करनेपर देवियाँ प्रसन्न हुईं। उन्होंने प्रत्यक्ष दर्शन देकर उसे तीनों लोकोंमें जो बल किसीमें नहीं, ऐसा दुर्लभ अतुलनीय बल प्राप्त करनेका वरदान दिया। वरदान देकर देवियोंने कहा—'पुत्र! तुम कुछ समयतक यहीं निवास करो! यहाँ एक विजय नामके ब्राह्मण आयेंगे, उनके सङ्गसे तुम्हारा और अधिक कल्याण होगा।'

देवियोंकी आज्ञा मानकर बर्बरीक वहीं रहने लगा। कुछ दिन पीछे मगध देशके विजय नामक ब्राह्मण वहाँ आये। उन्होंने कुमारेश्वर आदि सात शिवलिङ्गोंका पूजन किया और विद्याकी सफलताके लिये बहुत दिनोंतक देवियोंकी आराधना की। देवियोंने स्वप्नमें उन्हें आदेश दिया—'तुम सिद्धमाताके सामने आँगनमें सम्पूर्ण विद्याओंकी साधना करो। हमारा भक्त बर्बरीक तुम्हारी सहायता करेगा।'

विजयने भीमसेनके पौत्र बर्बरीकसे प्रातःकाल कहा—'तुम निद्रारहित एवं पवित्र होकर देवीके स्तोत्रका पाठ करते हुए यहीं रहो; जिससे जबतक मैं विद्याओंका साधन करूँ, तबतक कोई विघ्न न हो।'

विजय अपने साधनमें एकाग्रचित्तसे लग गये और बर्बरीक सावधानीसे रक्षा करता खड़ा रहा। और विजयकी साधनामें विघ्न करनेवाले रेपलेन्द्र नामक महादानव तथा द्रुहद्रुहा नामकी

राक्षसीका सहज ही संहार किया। तदनन्तर पातालमें जाकर नागोंको पीड़ा देनेवाले 'पलासी' नामक भयानक असुरोंको रौंदकर यमलोक भेज दिया।

उन असुरोंके मारे जानेपर नागोंके राजा वासुकि वहाँ आये। उन्होंने बर्बरीककी प्रशंसा की और प्रसन्न होकर उनसे

वरदान माँगनेको कहा। बर्बरीकने वरदानमें केवल यह माँगा—'विजय निर्विघ्न साधन करके सिद्धि प्राप्त करें।'

पातालसे निकलते समय परम सुन्दरी नागकन्याओंने बर्बरीकके रूप एवं पराक्रमपर मुग्ध होकर उनसे प्रार्थना की कि वे उन सबसे विवाह कर लें; किंतु जितेन्द्रिय बर्बरीकने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की। उन्होंने सदा ब्रह्मचारी रहनेका व्रत ले रक्खा था।

जब पातालसे बर्बरीक लौटे, विजयने उनको हृदयसे लगा लिया। उन सिद्ध पुरुषने कहा—'वीरेन्द्र! मैंने तुम्हारी कृपासे ही सिद्धि प्राप्त की है। मेरे हवनकुण्डमें सिंदूरके रंगकी परम पवित्र भस्म है, उसे तुम हाथमें भरकर ले लो। युद्धभूमिमें इसे छोड़ देनेपर साक्षात् मृत्यु भी शत्रु बनकर आ जाय तो उसे भी मरना पड़ेगा। इस प्रकार तुम शत्रुओंपर सरलतासे विजय प्राप्त कर सकोगे।'

बर्बरीकने कहा—'उत्तम पुरुष वही है, जो निष्काम भावसे किसीका उपकार करता है। जो किसी वस्तुकी इच्छा रखकर उपकार करता है, उसकी सज्जनतामें भला क्या गुण है? यह भस्म आप किसी दूसरेको दे दें। मैं तो आपको सफल एवं प्रसन्न देखकर ही प्रसन्न हूँ।'

विजयको देवताओंने सिद्धैश्वर्य प्रदान किया। उनका नाम 'सिद्धसेन' हो गया। उनके वहाँसे चले जानेके कुछ काल बीत जानेपर पाण्डवलोग जुएमें हारकर वनों एवं तीर्थोंमें घूमते हुए उस तीर्थमें पहुँचे। पाँचों पाण्डव और द्रौपदी बहुत थके

थे। चण्डिका देवीका दर्शन करके वे वहाँ बैठ गये। बर्बरीक भी वहीं थे; किंतु न तो पाण्डवोंने बर्बरीकको देखा था और न बर्बरीकने पाण्डवोंके कभी दर्शन किये थे, अतः वे एक दूसरेको पहचान न सके। प्याससे पीड़ित भीमसेन वहाँ कुण्डमें जल पीने उतरने लगे तो युधिष्ठिरने उनसे कहा—'पहले जल लेकर कुण्डसे दूर हाथ-पैर धो लो, तब जल पीना।' लेकिन भीमसेन प्याससे व्याकुल हो रहे थे। युधिष्ठिरकी बात बिना सुने ही वे जलमें उतर गये और वहीं हाथ-पैर धोने लगे। उन्हें ऐसा करते देखकर बर्बरीकने डाँटकर कहा—'तुम देवीके कुण्डमें हाथ-पैर धोकर उसे दूषित कर रहे हो, मैं सदा इसी जलसे देवीको स्नान कराता हूँ। जब तुममें इतना भी विचार नहीं तब फिर व्यर्थ क्यों तीर्थोंमें घूमते हो?'

भीमसेनने भी गर्ज करके बर्बरीकको डाँटा और–'जल स्नानके ही लिये है, तीर्थमें स्नान करनेकी आज्ञा है' आदि कहकर अपने कार्यका समर्थन किया। बर्बरीकने बताया—'जिनके जल बहते हैं, ऐसे तीर्थोंमें ही भीतर जाकर स्नान करनेकी विधि है। कूप-सरोवर आदिसे जल लेकर बाहर स्नान करना चाहिये ऐसा शास्त्रका विधान है। जहाँसे भक्तजन देवताओंको स्नान करानेका जल न लेते हों और जो सरोवर देवस्थानसे सौ हाथसे अधिक दूर हो, वहाँ पहले बाहर दोनों पैर धोकर तब जलमें स्नान किया जाता है। जो जलमें मल, मूत्र, विष्ठा, कफ, थूक और कुल्ला छोड़ते हैं, वे ब्रह्महत्यारेके समान हैं।

'जिसके हाथ-पैर, मन-इन्द्रियाँ अपने वशमें हों जो संयमी

हो, वही तीर्थका फल पाता है। मनुष्य पुण्यकर्मके द्वारा दो घड़ी भी जीवित रहे तो उत्तम है, पर लोकविरोधी पापकर्म करके कल्पपर्यन्तकी भी आयु मिलती हो तो उसे स्वीकार न करे। इसलिये तुम झटपट बाहर आ जाओ।'

बर्बरीककी शास्त्रसम्मत बातपर जब भीमसेनने ध्यान नहीं दिया, तब बर्बरीकने ईंटके टुकड़े भीमसेनके मस्तकपर लक्ष्य बनाकर मारने प्रारम्भ किये। आघातको बचाकर भीम बाहर निकल आये और बर्बरीकसे भिड़ गये। दोनों ही महाबली थे, अतः दोनों जमकर मल्लयुद्ध करने लगे। दो घड़ीमें भीमसेन दुर्बल पड़ने लगे। बर्बरीक उन्हें सिरसे ऊपर उठाकर समुद्रमें फेंकनेके लिये चल पड़ा। समुद्रके किनारे पहुँचनेपर आकाशमें स्थित होकर भगवान् शङ्करने कहा—'राक्षसश्रेष्ठ! इन्हें छोड़ दो। ये भरतकुलके रत्न तुम्हारे पितामह पाण्डुनन्दन भीमसेन हैं। ये तुम्हारे द्वारा सम्मानित होने योग्य हैं।'

बर्बरीकने जो यह बात सुनी तो वह भीमसेनको छोड़कर उनके चरणोंपर गिर पड़ा। वह अपनेको धिक्कारने लगा, फूट-फूटकर रोने और क्षमा माँगने लगा। उसे अत्यन्त व्याकुल होते देख भीमसेनने छातीसे लगा लिया। उसे समझाया—'बेटा! तुम्हारा कोई दोष नहीं है। भूल हमसे ही हो रही थी। कुमार्गपर चलनेवाला कोई भी हो, क्षत्रियको उसे दण्ड देना ही चाहिये। मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मेरे पूर्वज धन्य हैं कि उनके कुलमें तुम्हारे-जैसा धर्मात्मा पुत्र उत्पन्न हुआ है। तुम सत्पुरुषोंद्वारा प्रशंसनीय हो। तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।'

बर्बरीकका इससे शोक नहीं मिटा। वह कहने लगा—'पितामह! मैं प्रशंसाके योग्य नहीं हूँ। सब पापोंका प्रायश्चित्त है, परंतु जो माता-पिताका भक्त नहीं, उसका उद्धार नहीं होता। जिस शरीरसे मैंने अपने पूज्य पितामहका अपराध किया है, उसे आज महीसागर-संगममें त्याग दूँगा, जिससे दूसरे जन्मोंमें मुझसे ऐसा अपराध न हो।'

वह समुद्रके किनारे पहुँचा और कूदनेको उद्यत हो गया। उस समय वहाँ सिद्धाम्बिका तथा चारों दिशाओंकी देवियाँ भगवान् रुद्रके साथ आयीं। उन्होंने बर्बरीकको आत्महत्या करनेसे समझाकर रोका। उनके रोकनेपर उदास मनसे वह लौट आया। पाण्डवोंको उसके पराक्रमको देखकर बड़ा आश्चर्य एवं प्रसन्नता हुई। बर्बरीकका उन्होंने सम्मान किया।

जब पाण्डवोंके वनवासकी अवधि समाप्त हो गयी और दुरात्मा दुर्योधनने उनका राज्य लौटाना स्वीकार नहीं किया, तब कुरुक्षेत्रके मैदानमें महाभारत-युद्धकी तैयारी होने लगी। युद्धके प्रारम्भमें महाराज युधिष्ठिरने अर्जुनसे अपने पक्षके महारथियोंकी शक्तिके विषयमें प्रश्न किया। अर्जुनने सबके पराक्रमकी प्रशंसा करके अन्तमें बताया कि 'मैं अकेला ही कौरव-सेनाको एक दिनमें नष्ट करनेमें समर्थ हूँ।' इस बातको सुनकर बर्बरीकसे नहीं रहा गया। उसने कहा—'मेरे पास ऐसे दिव्य अस्त्र-शस्त्र एवं पदार्थ हैं कि मैं एक मुहूर्तमें ही सारी कौरवसेनाको यमलोक भेज सकता हूँ।'

भगवान् श्रीकृष्णने बर्बरीककी बातका समर्थन किया और

फिर कहा—'बेटा ! तुम भीष्म, द्रोण आदिसे रक्षित कौरव-सेनाको एक मुहूर्तमें कैसे मार सकते हो ?'

भगवान्की बात सुनकर अतुल बली बर्बरीकने अपना भयंकर धनुष चढ़ा लिया और उसपर एक बाण रक्खा। उस पोले बाणको लाल रंगसे भरकर कानतक खींचकर उसने छोड़ दिया। उसके बाणसे उड़ी भस्म दोनों सेनाओंके सैनिकोंके मर्मस्थलपर जाकर गिरी। केवल पाण्डवों, कृपाचार्य और अश्वत्थामाके शरीरपर वह नहीं पड़ी। बर्बरीकने इतना करके कहा—'आपलोगोंने देख लिया कि मैंने इस क्रियासे मरनेवाले वीरोंके मर्मस्थानका निरीक्षण किया है। अब देवीके दिये तीक्ष्ण बाण उनके उन मर्मस्थानोंमें मारकर उन्हें सुला दूँगा। आपलोगोंको अपने धर्मकी शपथ है, कोई शस्त्र न उठावें। मैं दो घड़ीमें ही सब शत्रुओंको मारे देता हूँ।'

बर्बरीक अतुल बली था, धर्मात्मा था और विनयी भी था; किंतु इस समय अहंकारवश उसने धर्मकी मर्यादा तोड़ दी। दोनों सेनाओंमें अनेक वीरोंको देवताओंसे, ऋषियोंसे वरदान प्राप्त थे। उन सब वरदानोंको व्यर्थ करनेसे देवता, धर्म एवं तपकी मर्यादा ही नष्ट हो जाती। धर्मकी मर्यादाके लिये ही अवतार धारण करनेवाले भगवान् श्रीकृष्णने बर्बरीककी यह बात सुनकर अपने चक्रसे उसका सिर काट दिया।

बर्बरीकके मरनेपर सब लोग भौंचक्के रह गये। पाण्डव शोकमें डूब गये। घटोत्कच मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। उसी समय वहाँ चौदह देवियाँ आयीं। उन्होंने घटोत्कच तथा पाण्डवोंको

बताया कि 'बर्बरीक पूर्वजन्ममें सूर्यवर्चा नामका यक्ष था। देवता ब्रह्माजीके साथ जब पृथ्वीका भार उतारनेके लिये मेरु पर्वतपर भगवान् नारायणकी स्तुति कर रहे थे, तब अहंकारवश उस यक्षने कहा—'पृथ्वीका भार तो मैं ही दूर कर दूँगा।' उसके गर्वके कारण रुष्ट होकर ब्रह्माजीने शाप दे दिया कि भूमिका भार दूर करते समय भगवान् उसका वध करेंगे। ब्रह्माजीके उस शापको सत्य करनेके लिये ही भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने बर्बरीकको मारा है।'

भगवान्‌के आदेशसे देवियोंने बर्बरीकके सिरको अमृतसे सींचकर राहुके सिरके समान अजर-अमर बना दिया। उस सिरने युद्ध देखनेकी इच्छा प्रकट की, इसलिये भगवान्‌ने उसे एक पर्वतपर स्थापित कर दिया और जगत्‌में पूजित होनेका वरदान दिया।

महाभारत-युद्धके अन्तमें धर्मराज युधिष्ठिर भगवान्‌के बार-बार कृतज्ञ हो रहे थे कि उन वासुदेवके अनुग्रहसे ही हमें विजय प्राप्त हुई है। भीमसेनने सोचा कि 'धृतराष्ट्रके पुत्रोंको तो मैंने मारा है, फिर श्रीकृष्णकी इतनी प्रशंसा धर्मराज क्यों कर रहे हैं?' भीमसेनने जब यह बात कही, तब अर्जुनने उन्हें समझाना चाहा—'मेरे-आपके द्वारा ये भीष्म, द्रोण आदि त्रिलोकजयी शूर नहीं मारे गये। हमलोग तो निमित्तमात्र हैं। युद्धमें विजय तो किसी अज्ञात पुरुषके द्वारा हुई है जिसे मैं सदा अपने आगे-आगे चलता देखता था।'

भीमसेन अर्जुनकी बात सुनकर हँस पड़े। उन्हें लगा कि अर्जुनको भ्रम हो गया है। ठीक निर्णय करानेके लिये वे अर्जुन और श्रीकृष्णके साथ पर्वतपर गये और बर्बरीकके सिरसे पूछा—'बेटा! तुमने पूरा युद्ध देखा है, बताओ कि युद्धमें कौरवोंको किसने मारा है?'

बर्बरीकने कहा—'मैंने तो शत्रुओंके साथ केवल एक पुरुषको युद्ध करते देखा है। उसके बायीं ओर पाँच मुख थे, और दस हाथ थे, जिनमें त्रिशूल आदि वह धारण किये था। दाहिनी ओर एक मुख और चार भुजाएँ थीं, जिनमें चक्र आदि अस्त्र-शस्त्र थे। बायीं ओर उसके जटाएँ थीं, और ललाटपर चन्द्रमा शोभित हो रहे थे, अङ्गमें भस्म लगी थी। दाहिनी ओर मस्तकपर मुकुट झलमला रहा था, अङ्गोंमें चन्दन लगा था और कण्ठमें कौस्तुभमणि शोभा दे रहा था। उस पुरुषको छोड़कर कौरवसेनाका नाश करनेवाले दूसरे किसी पुरुषको मैंने नहीं देखा।'

बर्बरीकके ऐसा कहनेपर आकाशसे पुष्पोंकी वर्षा होने लगी। भीमसेन लज्जित होकर भगवान्‌से क्षमा माँगने लगे। भगवान् तो क्षमाके समुद्र हैं। उन्होंने हँसकर भीमसेनको गले लगा लिया।

भगवान्‌ने बर्बरीकके सिरके पास जाकर कहा—'तुमको

भीमसेन अर्जुनकी बात सुनकर हँस पड़े। उन्हें लगा कि अर्जुनको भ्रम हो गया है। ठीक निर्णय करानेके लिये वे अर्जुन और श्रीकृष्णके साथ पर्वतपर गये और बर्बरीकके सिरसे पूछा—'बेटा! तुमने पूरा युद्ध देखा है, बताओ कि युद्धमें कौरवोंको किसने मारा है?'

बर्बरीकने कहा—'मैंने तो शत्रुओंके साथ केवल एक पुरुषको युद्ध करते देखा है। उसके बायीं ओर पाँच मुख थे, और दस हाथ थे, जिनमें त्रिशूल आदि वह धारण किये था। दाहिनी ओर एक मुख और चार भुजाएँ थीं, जिनमें चक्र आदि अस्त्र-शस्त्र थे। बायीं ओर उसके जटाएँ थीं, और ललाटपर चन्द्रमा शोभित हो रहे थे, अङ्गमें भस्म लगी थी। दाहिनी ओर मस्तकपर मुकुट झलमला रहा था, अङ्गोंमें चन्दन लगा था और कण्ठमें कौस्तुभमणि शोभा दे रहा था। उस पुरुषको छोड़कर कौरवसेनाका नाश करनेवाले दूसरे किसी पुरुषको मैंने नहीं देखा।'

बर्बरीकके ऐसा कहनेपर आकाशसे पुष्पोंकी वर्षा होने लगी। भीमसेन लज्जित होकर भगवान्से क्षमा माँगने लगे। भगवान् तो क्षमाके समुद्र हैं। उन्होंने हँसकर भीमसेनको गले लगा लिया।

भगवान्ने बर्बरीकके सिरके पास जाकर कहा—'तुमको इस क्षेत्रका त्याग नहीं करना चाहिये।'

नित्यके युद्धमें सम्मिलित होते थे। उनका आग्रह भी था इस विकट युद्धमें स्वयं प्रवेश करनेका। दूसरे दिन प्रातःकाल युद्धका प्रारम्भ हुआ। द्रोणाचार्यने व्यूहके मुख्य द्वारकी रक्षाका भार दुर्योधनके बहनोई जयद्रथको दिया था। जयद्रथने कठोर तपस्या करके यह वरदान भगवान् शङ्करसे प्राप्त कर लिया था कि अर्जुनको छोड़कर शेष पाण्डवोंको वह जीत सकेगा। अभिमन्युने अपनी बाण-वर्षासे जयद्रथको विचलित कर दिया और वे व्यूहके भीतर चले गये; किंतु शीघ्र ही जयद्रथ सावधान होकर फिर द्वार रोककर खड़ा हो गया। पूरे दिनभर शक्तिभर उद्योग करनेपर भी भीमसेन या दूसरा कोई भी योद्धा व्यूहमें नहीं जा सका। अकेले जयद्रथने वरदानके प्रभावसे सबको रोक रक्खा।

पंद्रह वर्षके बालक अभिमन्यु अपने रथपर बैठे शत्रुओंके व्यूहमें घुस गये थे। चारों ओरसे उनपर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा हो रही थी; किंतु इससे वे तनिक भी डरे नहीं। उन्होंने अपने धनुषसे पानीकी झड़ीके समान चारों ओर बाणोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी। कौरवोंकी सेनाके हाथी, घोड़े और सैनिक कट-कटकर गिरने लगे। रथ चूर-चूर होने लगे। चारों ओर हाहाकार मच गया। सैनिक इधर-उधर भागने लगे। द्रोणाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य आदि बड़े-बड़े महारथी सामने आये; किंतु बालक अभिमन्युकी गतिको कोई भी रोक नहीं सका। वे दिव्यास्त्रोंको दिव्यास्त्रोंसे काट देते थे। उनकी मारके आगे आचार्य द्रोण और कर्णतकको बार-बार पीछे हटना पड़ा। एक-

द्रोणाचार्यने अपनी सेनाके द्वारा चक्रव्यूह नामका व्यूह बनवाया। जब युधिष्ठिरजीको इस बातका पता लगा, तब वे बहुत ही निराश एवं दुखी हो गये। पाण्डव-पक्षमें एकमात्र अर्जुन ही चक्रव्यूह तोड़नेका रहस्य जानते थे। अर्जुनके न होनेसे पराजय स्पष्ट दिखलायी पड़ती थी। अपने पक्षके लोगोंको हताश होते देख अर्जुनके पंद्रह वर्षीय पुत्र सुभद्राकुमार अभिमन्युने कहा—'महाराज! आप चिन्ता क्यों करते हैं? मैं कल अकेला ही व्यूहमें प्रवेश करके शत्रुओंका गर्व दूर कर दूँगा।'

युधिष्ठिरने पूछा—'बेटा! तुम चक्रव्यूहका रहस्य कैसे जानते हो?'

अभिमन्युने बताया—'मैं माताके गर्भमें था, तब एक दिन पिताजीने मेरी मातासे चक्रव्यूहका वर्णन किया था। पिताजीने चक्रव्यूहके छः द्वार तोड़नेकी बात बतायी, इतनेमें मेरी माताको नींद आ गयी। पिताजीने उसके आगेका वर्णन नहीं किया। अतः मैं चक्रव्यूहमें प्रवेश करके उसके छः द्वार तोड़ सकता हूँ; किंतु उसका सातवाँ द्वार तोड़कर निकल आनेकी विद्या मुझे नहीं आती।'

उत्साहमें भरकर भीमसेनने कहा—'सातवाँ द्वार तो मैं अपनी गदासे तोड़ दूँगा।' धर्मराज युधिष्ठिर यद्यपि नहीं चाहते थे कि बालक अभिमन्युको व्यूहमें भेजा जाय, परंतु दूसरा कोई उपाय नहीं था। अभिमन्यु अतिरथी योद्धा थे और

नित्यके युद्धमें सम्मिलित होते थे। उनका आग्रह भी था इस विकट युद्धमें स्वयं प्रवेश करनेका। दूसरे दिन प्रातःकाल युद्धका प्रारम्भ हुआ। द्रोणाचार्यने व्यूहके मुख्य द्वारकी रक्षाका भार दुर्योधनके बहनोई जयद्रथको दिया था। जयद्रथने कठोर तपस्या करके यह वरदान भगवान् शङ्करसे प्राप्त कर लिया था कि अर्जुनको छोड़कर शेष पाण्डवोंको वह जीत सकेगा। अभिमन्युने अपनी बाण-वर्षासे जयद्रथको विचलित कर दिया और वे व्यूहके भीतर चले गये; किंतु शीघ्र ही जयद्रथ सावधान होकर फिर द्वार रोककर खड़ा हो गया। पूरे दिनभर शक्तिभर उद्योग करनेपर भी भीमसेन या दूसरा कोई भी योद्धा व्यूहमें नहीं जा सका। अकेले जयद्रथने वरदानके प्रभावसे सबको रोक रक्खा।

पंद्रह वर्षके बालक अभिमन्यु अपने रथपर बैठे शत्रुओंके व्यूहमें घुस गये थे। चारों ओरसे उनपर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा हो रही थी; किंतु इससे वे तनिक भी डरे नहीं। उन्होंने अपने धनुषसे पानीकी झड़ीके समान चारों ओर बाणोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी। कौरवोंकी सेनाके हाथी, घोड़े और सैनिक कट-कटकर गिरने लगे। रथ चूर-चूर होने लगे। चारों ओर हाहाकार मच गया। सैनिक इधर-उधर भागने लगे। द्रोणाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य आदि बड़े-बड़े महारथी सामने आये; किंतु बालक अभिमन्युकी गतिको कोई भी रोक नहीं सका। वे दिव्यास्त्रोंको दिव्यास्त्रोंसे काट देते थे। उनकी मारके आगे आचार्य द्रोण और कर्णतकको बार-बार पीछे हटना पड़ा। एक-

द्रोणाचार्यने अपनी सेनाके द्वारा चक्रव्यूह नामका व्यूह बनवाया। जब युधिष्ठिरजीको इस बातका पता लगा, तब वे बहुत ही निराश एवं दुखी हो गये। पाण्डव-पक्षमें एकमात्र अर्जुन ही चक्रव्यूह तोड़नेका रहस्य जानते थे। अर्जुनके न होनेसे पराजय स्पष्ट दिखलायी पड़ती थी। अपने पक्षके लोगोंको हताश होते देख अर्जुनके पंद्रह वर्षीय पुत्र सुभद्राकुमार अभिमन्युने कहा—'महाराज! आप चिन्ता क्यों करते हैं? मैं कल अकेला ही व्यूहमें प्रवेश करके शत्रुओंका गर्व दूर कर दूँगा।'

युधिष्ठिरने पूछा—'बेटा! तुम चक्रव्यूहका रहस्य कैसे जानते हो?'

अभिमन्युने बताया—'मैं माताके गर्भमें था, तब एक दिन पिताजीने मेरी मातासे चक्रव्यूहका वर्णन किया था। पिताजीने चक्रव्यूहके छः द्वार तोड़नेकी बात बतायी, इतनेमें मेरी माताको नींद आ गयी। पिताजीने उसके आगेका वर्णन नहीं किया। अतः मैं चक्रव्यूहमें प्रवेश करके उसके छः द्वार तोड़ सकता हूँ; किंतु उसका सातवाँ द्वार तोड़कर निकल आनेकी विद्या मुझे नहीं आती।'

उत्साहमें भरकर भीमसेनने कहा—'सातवाँ द्वार तो मैं अपनी गदासे तोड़ दूँगा।' धर्मराज युधिष्ठिर यद्यपि नहीं चाहते थे कि बालक अभिमन्युको व्यूहमें भेजा जाय, परंतु दूसरा कोई उपाय नहीं था। अभिमन्यु अतिरथी योद्धा थे और

पर-एक व्यूहके द्वारको तोड़ते, द्वाररक्षक महारथीको परास्त करते हुए वे आगे बढ़ते ही गये। उन्होंने छः द्वार पार कर लिये।

अभिमन्यु अकेले थे और उन्हें बराबर युद्ध करना पड़ रहा था। जिन महारथियोंको उन्होंने पराजित करके पीछे छोड़ दिया था, वे भी उन्हें घेरकर युद्ध करने आ पहुँचे थे। इस सातवें द्वारका मर्मस्थल कहाँ है, यह वे जानते नहीं थे। इतनेपर भी उनमें न तो थकान दीखती थी और न उनका वेग ही रुकता था। दूसरी ओर कौरव-पक्षके बड़े-बड़े सभी महारथी अभिमन्युके बाणोंसे घायल हो गये थे। द्रोणाचार्यने स्पष्ट कह दिया—'जबतक इस बालकके हाथमें धनुष है, इसे जीतनेकी आशा नहीं करनी चाहिये।'

कर्ण आदि छः महारथियोंने एक साथ अन्यायपूर्वक अभिमन्युपर आक्रमण कर दिया। उनमेंसे एक-एकने उनके रथके एक-एक घोड़े मार दिये। एकने सारथिको मार दिया और कर्णने उनका धनुष काट दिया। इतनेपर भी अभिमन्यु रथपरसे कूदकर उन शत्रुओंपर प्रहार करने लगे और उनकी मारसे एक बार फिर चारों ओर भगदड़ मच गयी। क्रूर शत्रुओंने अन्याय करते हुए उनको घेर रक्खा था। सब-के-सब उनपर शस्त्र-वर्षा कर रहे थे। उनका कवच और शिरस्त्राण कटकर गिर गया था। उनका शरीर बाणोंके लगनेसे घायल हो गया था और उससे रक्तकी धाराएँ गिर रही थीं। जब अभिमन्युके पासके सब अस्त्र-शस्त्र कट गये, तब उन्होंने रथका

कोई उन्हें सम्मुख आकर हरा नहीं सका। शत्रुओंने पीछेसे उनके शिरस्त्राणरहित सिरपर गदा मारी। उस गदाके लगनेसे अभिमन्यु सदाके लिये रणभूमिमें गिर पड़े। इस प्रकार संग्राममें शूरतापूर्वक उन्होंने वीर-गति प्राप्त की। इसीसे भगवान् श्रीकृष्णने बहिन सुभद्राको धैर्य बँधाते हुए अभिमन्युकी-जैसी मृत्युको अपनेसहित सबके लिये वाञ्छनीय बतलाया था।
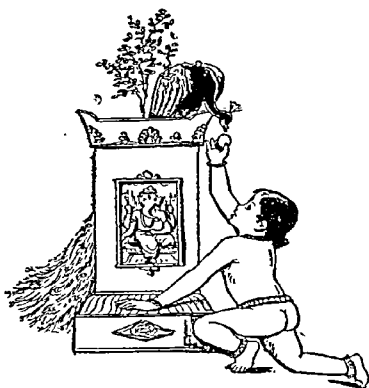
वीर बालक भरत

ऋषभदेवके पुत्र भरतजी योगी त्यागी ज्ञानी ।
पर राजा दुष्यन्त-पुत्र थे भरत शूर बल-खानी ॥
अपना देश नामसे दोनोंके 'भारत' कहलाता ।
त्याग ज्ञान औ बल-पौरुषकी है महिमा बतलाता ॥
ऋषभपुत्र राजर्षि भरतकी पढ़ना कभी कहानी ।
भरत दूसरेके बचपनकी है वीरता बतानी ॥
जन्म हुआ था ऋषि-आश्रममें माताने था पाला ।
नन्हेंपनसे ही निर्भय था वह शकुन्तला लाला ॥
घुटनों चलने लगे भरत तब रेंग निकल जाते थे ।
बाघ-सिंहके पास पहुँच मुख उनका थपकाते थे ॥
जब वे चलने लगे पकड़ लाते सिंहनि के बच्चे ।
गुर्रानेसे धमकाते थे, नहीं तनिक थे कच्चे ॥

'रह मैं तेरे दाँत गिनूँगा, बड़े सिंहसे कहते ।
उसके मुँहमें हाथ डालकर सचमुच गिनते रहते ॥
चार बरसके भरत खींचते कान बाघका जाकर ।
हँसते बैठ पीठपर उसकी ताली बजा-बजाकर ॥
छड़ी दिखाते सिंह-रीछको—'बैठ ! नहीं मारूँगा ।
लड़ ले कुश्ती पकड़ पटक दूँ क्या तुझसे हारूँगा' ॥
पूँछ हिलाते बाघ-सिंह थे अपना प्यार दिखाकर ।
हाथी-रीछ खिलाते उनको मीठे फल ला लाकर ॥
ऐसे निर्भय वीर पुत्रसे माता खुश रहती थी ।
'मेरा पुत्र देशका पालन कर लेगा' कहती थी ॥
होकर बड़े भरत धर्मात्मा राजा हुए महान ।
अबतक वीर किया करते हैं उनका गौरव गान ॥
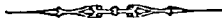
वीर बालक स्कन्दगुप्त

हूण, शक आदि मध्य एशियाकी मरुभूमिमें रहनेवाली बर्बर जातियाँ हैं, जो वहाँ पाँचवीं शताब्दीमें थीं। हूण और शकजातिके लोग बड़े लड़ाकू योधा और निर्दय थे। इन लोगोंने यूरोपको अपने आक्रमणोंसे बहुत बार उजाड़-सा दिया। रोम-का बड़ा भारी राज्य इनकी चढ़ाइयोंसे नष्ट हो गया। चीनको भी अनेकों बार इन लोगोंने लूटा। ये लोग बड़ी भारी सेना लेकर जिस देशपर चढ़ जाते थे, वहाँ हाहाकार मच जाता था।

एक बार समाचार मिला कि बड़ी भारी हूणोंकी सेना हिमालय पर्वतके उस पार भारतपर आक्रमण करनेके लिये इकट्ठी हो रही है। उस समय भारतमें सबसे बड़ा मगधका राज्य था। वहाँके सम्राट् कुमारगुप्त थे। उनके पुत्र युवराज स्कन्दगुप्त उस समय तरुण नहीं हुए थे। हूणोंकी सेना एकत्र होनेका जैसे ही समाचार मिला, स्कन्दगुप्त अपने पिताके पास दौड़े हुए गये। सम्राट् कुमारगुप्त अपने मन्त्रियों और सेना-पतियोंके साथ उस समय हूणोंसे युद्ध करनेकी ही सलाह कर रहे थे। स्कन्दगुप्तने पितासे कहा कि 'मैं भी युद्ध करने जाऊँगा।'

महाराज कुमारगुप्तने बहुत समझाया कि 'हूण बहुत पराक्रमी और निर्दय होते हैं। वे अधर्मपूर्वक छिपकर भी लड़ते हैं और उनकी संख्या भी अधिक है। उनसे लड़ना तो मृत्युसे ही लड़ना है।'

लेकिन युवराज स्कन्दगुप्त ऐसी बातोंसे डरनेवाले नहीं थे । उन्होंने कहा—'पिताजी ! देश और धर्मकी रक्षाके लिये मर जाना तो वीर क्षत्रियके लिये बड़े मङ्गलकी बात है । मैं मृत्युसे लड़ूँगा और अपने देशको क्रूर शत्रुओंद्वारा लूटे जानेसे बचाऊँगा ।'

महाराज कुमारगुप्तने अपने वीर पुत्रको हृदयसे लगा लिया । स्कन्दगुप्तको युद्धमें जानेकी आज्ञा मिल गयी । उनके साथ मगधके दो लाख वीर सैनिक चल पड़े । पटनासे चलकर पंजाबको पार करके हिमालयकी बर्फसे ढकी सफेद चोटियों-पर वे वीर सैनिक चढ़ गये । भयानक सर्दी, शीतल हवा और बर्फके तूफान भी उन्हें आगे बढ़नेसे रोक नहीं सके ।

हूणोंने सदा दूसरे देशोंपर आक्रमण किया था । कोई आगे बढ़कर उनपर भी आक्रमण कर सकता है, यह उन्होंने कभी सोचा ही नहीं था । जब उन्होंने देखा कि हिमालयकी चोटीपरसे बड़ी भारी सेना उनपर आक्रमण करने उतर रही है तो वे भी लड़नेको तैयार हो गये । उन्हें सबसे अधिक आश्चर्य यह हुआ कि उस पर्वतसे उतरती सेनाके आगे एक छोटी अवस्थाका बालक घोड़ेपर बैठा नंगी तलवार लिये शंख बजाता आ रहा है । वे थे युवराज स्कन्दगुप्त ।

युद्ध आरम्भ हो गया । युवराज स्कन्दगुप्त जिधरसे निकलते थे, शत्रुओंको काट-काटकर ढेर कर देते थे । थोड़ी देरके युद्धमें ही हूणोंकी हिम्मत टूट गयी । वे लोग इधर-उधर

भागने लगे। पूरी हूणसेना भाग खड़ी हुई। शत्रुओंपर विजय प्राप्त करके जब युवराज स्कन्दगुप्त फिर हिमालयको पारकर अपने देशमें उतरे, उनका स्वागत करनेके लिये लाखों मनुष्यों-की भीड़ वहाँ पहलेसे खड़ी थी। मगधमें तो राजधानीसे पाँच कोसतकका मार्ग सजाया गया था उनके स्वागतके लिये। पूरे देशमें उस दिन उत्सव मनाया गया।

यही युवराज स्कन्दगुप्त आगे जाकर भारतके सम्राट् हुए। आजके ईरान और अफगानिस्तानतक इन्होंने अपने राज्यका विस्तार कर लिया था। इनके-जैसा पराक्रमी वीर भारतको छोड़कर दूसरे देशके इतिहासमें मिलना कठिन है। इन्होंने दिग्विजय करके अश्वमेध यज्ञ किया था। वीर होनेके साथ ये बहुत ही धर्मात्मा, दयालु और न्यायी सम्राट् हुए थे।

वीर बालक चण्ड

चित्तौड़के राजसिंहासनपर उस समय राणा लाखा विराजमान थे। अपने पराक्रमसे युद्धमें दिल्लीके बादशाह लोदीको उन्होंने पराजित किया था। उनकी कीर्ति चारों ओर फैल रही थी। राणाके पुत्रोंमें चण्ड सबसे बड़े थे और गुणोंमें भी वे श्रेष्ठ थे। जोधपुरके राठौर नरेश रणमल्लजीने राजकुमार चण्डके साथ अपनी पुत्रीका विवाह करनेके लिये चित्तौड़

नारियल भेजा। जिस समय जोधपुरसे नारियल लेकर ब्राह्मण राजसभामें पहुँचा, राजकुमार चण्ड वहाँ नहीं थे। ब्राह्मणने जब कहा कि 'राजकुमारके लिये मैं नारियल ले आया हूँ' तब परिहासमें राणा लाखाने कहा—'मैंने तो समझा था कि आप इस बूढ़ेके लिये नारियल लाये हैं और मेरे साथ खेल करना चाहते हैं।' राणाकी बात सुनकर सब लोग हँसने लगे।

राजकुमार चण्ड उसी समय राजसभामें आ रहे थे। उन्होंने राणाके शब्द सुन लिये थे। बड़ी नम्रतासे उन्होंने कहा—'परिहासके लिये ही सही, जिस कन्याका नारियल मेरे पिताने अपने लिये आया कह दिया, वह तो मेरी माता हो चुकी। मैं उसके साथ विवाह नहीं कर सकता।'

बात बड़ी विचित्र हो गयी। नारियलको लौटा देना तो जोधपुरनरेश तथा उनकी निर्दोष कन्याका अपमान करना था और राजकुमार चण्ड किसी प्रकार यह विवाह करनेको तैयार नहीं होते थे। राणाने बहुत समझाया, परंतु चण्ड टस-से-मस नहीं हुए। जिस पुत्रने कभी पिताकी आज्ञा नहीं टाली थी, उसे इस प्रकार हठ करते देख राणाको क्रोध आ गया। उन्होंने कहा—'यह नारियल लौटाया नहीं जा सकता। रणमल्लका सम्मान करनेके लिये इसे मैं स्वयं स्वीकार कर रहा हूँ; किंतु स्मरण रक्खो कि यदि इस सम्बन्धसे कोई पुत्र हुआ तो चित्तौड़के सिंहासनपर वही बैठेगा।'

कुमार चण्डको पिताकी इस बातसे तनिक भी दुःख नहीं हुआ। उन्होंने भीष्मपितामहकी प्रतिज्ञाके समान प्रतिज्ञा करते हुए कहा—'पिताजी! मैं आपके चरणोंको छूकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि मेरी नयी मातासे जो पुत्र होगा, वही सिंहासनपर बैठेगा और मैं जीवनपर्यन्त उसकी भलाईमें लगा रहूँगा।' राजकुमारकी प्रतिज्ञा सुनकर सब लोग उनकी प्रशंसा करने लगे।

बारह वर्षकी राजकुमारीका पाणिग्रहण पचास वर्षके राणा लाखाने किया। इस नवीन रानीसे उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम 'मुकुल' रक्खा गया। जब मुकुल पाँच वर्षके थे, तभी गयातीर्थपर मुसल्मानोंने आक्रमण किया। तीर्थकी रक्षाके लिये राणाने सेना सजायी। इतनी बड़ी पैदल यात्रा तथा युद्धसे जीवित लौटनेकी आशा करना ही व्यर्थ था। राजकुमार चण्डसे राणाने कहा—'बेटा! मैं तो धर्म-रक्षाके लिये जा रहा हूँ। तेरे इस छोटे भाई 'मुकुल'की आजीविकाका क्या प्रबन्ध होगा?'

चण्डने कहा—'चित्तौड़का राजसिंहासन इन्हींका है।' राणा नहीं चाहते थे कि पाँच वर्षका बालक सिंहासनपर बैठाया जाय। उन्होंने चण्डको अनेक प्रकारसे समझाना चाहा, परंतु चण्ड अपनी प्रतिज्ञापर स्थिर रहे। राणाके सामने ही उन्होंने मुकुलका राज्याभिषेक किया और सबसे पहले स्वयं उनका सम्मान किया।

राणा लाखा युद्धके लिये गये और फिर नहीं लौटे। राजगद्दीपर मुकुलको बैठाकर चण्ड उनकी ओरसे राज्यका प्रबन्ध करने लगे। उनके सुप्रबन्धसे प्रजा प्रसन्न एवं सम्पन्न हो गयी। यह सब होनेपर भी राजमाताको यह संदेह हो गया कि चण्ड मेरे पुत्रको हटाकर स्वयं राज्य लेना चाहते हैं। उन्होंने यह बात प्रकट कर दी। जब राजकुमार चण्डने यह बात सुनी, तब उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे राजमाताके पास गये और बोले—'माँ! आपको संतुष्ट करनेके लिये चित्तौड़ छोड़ रहा हूँ; किंतु जब भी आपको मेरी सेवाकी आवश्यकता हो, मैं समाचार पाते ही आ जाऊँगा।'

चण्डके चले जानेपर राजमाताने जोधपुरसे अपने भाईको बुला लिया। पीछे स्वयं रणमल्लजी भी बहुत-से सेवकोंके साथ चित्तौड़ आ गये। थोड़े दिनोंमें उनकी नीयत बदल गयी। वे अपने दौहित्रको मारकर चित्तौड़का राज्य हड़प लेनेका षड्यन्त्र रचने लगे। राजमाताको जब इसका पता लगा, वे बहुत दुखी हुईं। अब उनका कहीं कोई सहायक नहीं था। उन्होंने बड़े दुःखसे चण्डको पत्र लिखकर क्षमा माँगी और चित्तौड़को बचानेके लिये बुलाया। संदेश पाते ही चण्ड अपने प्रयत्नमें लग गये। अन्तमें चित्तौड़को उन्होंने राठौरोंके पंजेसे मुक्त कर दिया। रणमल्ल तथा उनके सहायक मारे गये तथा उनके पुत्र बोधाजी भाग गये। कुमार चण्ड आजीवन राणा मुकुलकी सेवामें लगे रहे।

प्रणवीर बालक प्रताप

महाराणा प्रतापका जन्म सन् १५४० ई० में हुआ था। वे महाराणा उदयसिंहके ज्येष्ठ पुत्र थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा मेवाड़ राजवंश-परम्पराके अनुकूल हुई थी। अस्त्र-शस्त्र, सेना-संचालन, मृगया तथा राज्योचित प्रबन्धकी दक्षता उन्होंने बाल्यावस्थामें ही पूर्णरूपसे प्राप्त कर ली थी। राणा उदयसिंह अपने कनिष्ठ पुत्र जगमलको बहुत प्यार करते थे और उन्हींको अपना उत्तराधिकारी घोषित करनेका उन्होंने निश्चय कर लिया। प्रताप पितृभक्त बालक थे, उन्होंने पिताके निर्णयका तनिक भी विरोध नहीं किया, उनके सामने रामायणके प्राणधन भगवान् श्रीरामके राज्य-त्याग और वनवासका आदर्श उपस्थित था। प्रतापको बाल्यकालमें सदा यही बात खटकती रहती थी कि भारत-भूमि विदेशियोंकी दासताकी हथकड़ी और बेड़ीमें सिसक रही है। वे स्वदेशकी मुक्ति-योजनामें सदा चिन्तनशील रहते थे। उनके मामा झालोड़के राव अक्षयराज बालक प्रतापकी पीठपर सदा हाथ रखते थे। उन्हें आशङ्का थी कि ऐसा न हो कि प्रताप अन्तःपुरके षड्यन्त्रोंके शिकार हो जायँ और इस प्रकार स्वाधीनताकी पवित्र यज्ञवेदीका कार्य अधूरा ही रह जाय।

प्रताप बड़े साहसी बालक थे। स्वतन्त्रता और वीरताके भाव उनके रग-रगमें भरे हुए थे। कभी-कभी बालक प्रताप घोड़ेकी पीठसे उतरकर बड़ी श्रद्धा और आदरसे महाराणा

कुम्भके विजयस्तम्भकी परिक्रमाकर तथा मेवाड़की पवित्र धूलि मस्तकपर लगाकर कहा करते थे कि 'मैंने वीर क्षत्राणीका दुग्ध-पान किया है, मेरे रक्तमें महाराणा साँगाका ओज प्रवाहित है, चित्तौड़के विजय-स्तम्भ! मैं तुमसे स्वतन्त्रता और मातृभूमि-भक्तिकी शपथ लेकर कहता हूँ, विश्वास दिलाता
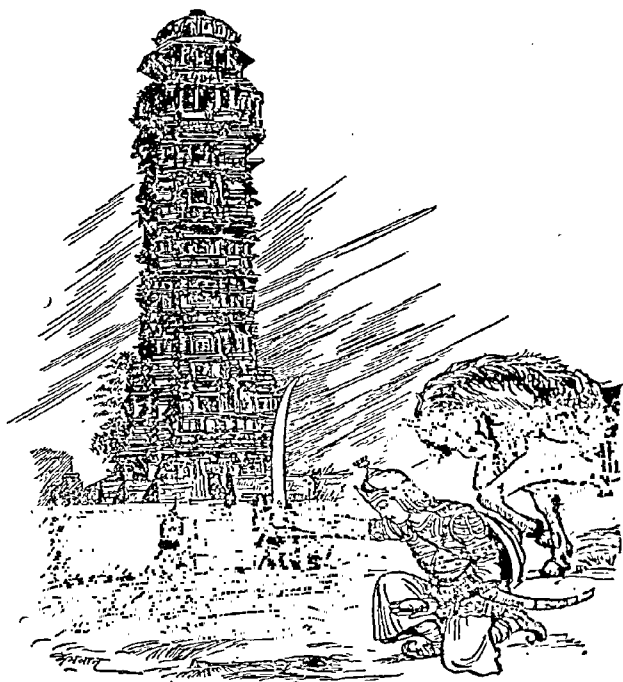
हूँ कि तुम सदा उन्नत और सिसौदिया-गौरवके विजय-प्रतीक बने रहोगे। शत्रु तुम्हें अपने स्पर्शसे मेरे रहते अपवित्र नहीं कर सकते।'

बालक प्रतापके सामने सदा राणा साँगाका आदर्श रहता था। वे प्रायः श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते समय कहा करते थे कि 'मैं महाराणा साँगाके अधूरे कार्यको अवश्य पूरा करूँगा, उनके दिल्ली-विजय-स्वप्नको सत्यमें रूपान्तरित करना ही मेरा जीवन-ध्येय है। वह दिन दूर नहीं है, जब दिल्लीका अधिपति साँगाके वंशजसे प्राणकी भीख माँगेगा।'

प्रतापने बचपनमें ही यह सिद्ध कर दिखाया कि बाप्पा रावलकी संतानका सिर किसी मनुष्यके आगे नहीं झुक सकता। बालक प्रतापने राज्यप्राप्तिका नहीं, देशकी बन्धन-मुक्तिका व्रत लिया था।

वीर बालक बादल

उस समय दिल्लीकी गद्दीपर अलाउद्दीन खिलजी बादशाह होकर बैठा था। यह बहुत धूर्त तथा निष्ठुर बादशाह था। राजपूतानेमें चित्तौड़के सिंहासनपर उस समय राणा भीमसिंह विराजमान थे। अलाउद्दीनने सुना कि राणाकी महारानी पद्मिनी बहुत ही सुन्दर हैं। वह पद्मिनीको किसी भी प्रकार पानेके लिये बड़ी भारी सेना लेकर राजपूताने गया और चित्तौड़से थोड़ी दूरपर उसने अपनी सेनाका पड़ाव डाला। उस धूर्तने राणाके पास संदेश भेजा—'मैं पद्मिनीका प्रतिबिम्ब शीशेमें देखकर लौट जाऊँगा।' महाराणा भीमसिंहने इतनी बातके लिये व्यर्थ रक्तपात करना अच्छा नहीं समझा। उनके बुलानेपर अलाउद्दीन दुर्गमें आया। दर्पणमें रानी पद्मिनीका प्रतिबिम्ब उसे दिखा दिया गया। लौटते समय राणा उसे दुर्गसे बाहरतक पहुँचाने आये। दुर्गसे बाहर अलाउद्दीनने पहलेसे अपने सैनिक छिपा रक्खे थे। उन्होंने राणापर आक्रमण करके उन्हें पकड़ लिया और बंदी बनाकर वे अपने शिविरमें ले गये।

राणाके बंदी हो जानेसे चित्तौड़के दुर्गमें हाहाकार मच गया। बादशाहकी सेना इतनी बड़ी थी कि उससे सीधे संग्राम

करके विजय पानेकी कोई आशा नहीं थी। अन्तमें रानी पद्मिनीके मामा गोराने एक योजना बनायी। अलाउद्दीनको संदेश भेजा गया—'रानी पद्मिनी बादशाहके पास आनेको तैयार हैं, यदि उनके आ जानेपर बादशाह राणाको छोड़ दें। रानीके साथ सात सौ दासियाँ भी आयेंगी। शाही सैनिक उन्हें रोकें नहीं।' बादशाहने इस बातको बड़े उत्साहसे स्वीकार कर लिया। सायंकाल अन्धकार होनेपर दुर्गसे सात सौ पालकियाँ निकलीं। बादशाहके सैनिक विजयके उन्माद में उत्सव मना रहे थे। शाही सेनामें पहुँचकर रानीने पहले राणासे भेंट करनी चाही और यह माँग भी स्वीकार हो गयी।

आप क्या सोचते हैं कि रानी पद्मिनी पालकीमें बैठकर यवन बादशाहके पास आयी थीं ? पालकीमें रानी बना स्त्री-वेशमें छिपा अपने अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित रानीका बारह वर्षका सुन्दर भानजा बालक बादल वहाँ आया था। दूसरी पालकियोंमें भी राजपूत सरदार बैठे थे और पालकी उठानेवाले कहारोंके वेशमें भी राजपूत योद्धा ही थे। राणाको मुक्त करके घोड़ेपर बैठाकर कुछ सैनिकोंके साथ दुर्गकी ओर उन्होंने भेज दिया और स्वयं अलाउद्दीनकी सेनापर शस्त्र लेकर टूट पड़े। गोरा इस सेनाका सेनापतित्व कर रहे थे। बादलने इस युद्धमें अद्भुत वीरता दिखलायी। लेकिन मुट्ठीभर राजपूत समुद्रके समान विशाल शाही सेनासे कबतक लड़ते। गोरा रणभूमिमें काम आये। दोनों हाथसे तलवार चलाकर यवन-सैनिकोंको गाजर-मूलीकी भाँति काटता

वीर बालक बादल

उस समय दिल्लीकी गद्दीपर अलाउद्दीन खिलजी बादशाह होकर बैठा था। यह बहुत धूर्त तथा निष्ठुर बादशाह था। राजपूतानेमें चित्तौड़के सिंहासनपर उस समय राणा भीमसिंह विराजमान थे। अलाउद्दीनने सुना कि राणाकी महारानी पद्मिनी बहुत ही सुन्दर हैं। वह पद्मिनीको किसी भी प्रकार पानेके लिये बड़ी भारी सेना लेकर राजपूताने गया और चित्तौड़से थोड़ी दूरपर उसने अपनी सेनाका पड़ाव डाला। उस धूर्तने राणाके पास संदेश भेजा—'मैं पद्मिनीका प्रतिबिम्ब शीशेमें देखकर लौट जाऊँगा।' महाराणा भीमसिंहने इतनी बातके लिये व्यर्थ रक्तपात करना अच्छा नहीं समझा। उनके बुलानेपर अलाउद्दीन दुर्गमें आया। दर्पणमें रानी पद्मिनीका प्रतिबिम्ब उसे दिखा दिया गया। लौटते समय राणा उसे दुर्गसे बाहरतक पहुँचाने आये। दुर्गसे बाहर अलाउद्दीनने पहलेसे अपने सैनिक छिपा रक्खे थे। उन्होंने राणापर आक्रमण करके उन्हें पकड़ लिया और बंदी बनाकर वे अपने शिविरमें ले गये।

राणाके बंदी हो जानेसे चित्तौड़के दुर्गमें हाहाकार मच गया। बादशाहकी सेना इतनी बड़ी थी कि उससे सीधे संग्राम

वीर बालक प्रताप

यह महाराणा प्रतापकी बात नहीं है। यह तो चितौड़के एक साधारण राजपूत बालककी बात है। उसका नाम प्रताप था। उसे गाना-बजाना बहुत पसंद था। उसके माता-पिता और मित्र उससे प्रसन्न नहीं रहते थे। सब लोग उसे डाँटते और चिढ़ाते थे कि 'राजपूतके लड़के होकर तुम तलवार चलाना नहीं सीखते हो। देशपर जब संकट आवेगा तब तुम अपने कर्तव्यका कैसे पालन करोगे? देशकी सेवा न करे, देशके लिये मर-मिटनेको तैयार न हो, ऐसा राजपूत भी क्या किसी कामका मनुष्य है?

प्रताप उन लोगोंसे कहा करता था—'देशकी सेवा केवल तलवारसे नहीं होती। संगीतसे भी देशकी सेवा हो सकती है। काम पड़नेपर मैं बता दूँगा कि देशके लिये मर-मिटनेमें मैं किसीसे पीछे नहीं हूँ।'

किसीको प्रतापकी बात ठीक नहीं लगती थी। लोग समझते थे कि यह सुकुमार तो है ही, डींग हाँकनेवाला भी है। प्रताप भी अपनी धुनका ऐसा पक्का था कि वह किसीकी बातपर ध्यान ही नहीं देता था।

दिल्लीमें उन दिनों मुगल बादशाह थे। मुगलोंकी बड़ी भारी सेनाने चित्तौड़पर चढ़ाई कर दी। लेकिन चित्तौड़का किला इतना दृढ़ था कि मुगल-सेना उसपर विजय नहीं पा सकती थी। किलेकी दीवाल या फाटक टूटते ही नहीं थे।

हुआ बालक बादल दुर्गमें पहुँच गया। अलाउद्दीन चाहता था कि इस युद्धका समाचार दुर्गमें न पहुँचे। अचानक आक्रमण करके वह पद्मिनीको पकड़कर दिल्ली ले जाना चाहता था; किंतु उस बारह वर्षके बादलने उसकी एक भी चाल चलने नहीं दी। दुर्गमें समाचार पहुँचते ही राजपूत वीरोंने केसरिया बाना पहिना और निकल पड़े धर्म एवं मातृभूमिपर मस्तक चढ़ाने। बड़ी कठिनाईसे अलाउद्दीनको विजय प्राप्त हुई। अपनी अधिकांश सेनाकी बलि देकर जब वह चित्तौड़के पवित्र दुर्गमें घुसा, तब वहाँ बहुत बड़ी चिता धायँ-धायँ करके जल रही थी। राजपूतानेकी देवियाँ पापी पुरुषके स्पर्शसे बचनेके लिये अग्निमें प्रवेश करके स्वर्ग पहुँच चुकी थीं। अलाउद्दीनने अपना सिर पीट लिया। भारतकी वह गौरवमयी दिव्यभूमि सतियोंके तेजके साथ वीर बालक बादलकी शूरता एवं बलिदानसे नित्य उज्ज्वल है।

बार-बार मुगल-सेनाको किलेके भीतरके राजपूत वीरोंके बाणोंकी मार खाकर पीछे लौटना पड़ता था।

चित्तौड़में जो शूरवीर राजपूत थे, वे महाराणाकी सेनामें भर्ती हो गये थे। लेकिन प्रताप एक तो बालक था और दूसरे उसे अस्त्र-शस्त्र चलाना आता भी नहीं था। वह सेनामें नहीं भर्ती हुआ, पर उसने दूसरा काम चुन लिया। वह राजपूतोंकी सेनामें घूम-घूमकर वीरताके गीत गाता और उन्हें उत्साह दिलाता था। वह चित्तौड़में और उसके आसपासकी बस्तियोंमें भी अकेला ही चला जाता था। वहाँ अपने वीरताके गीत सुनाकर युवकों और तरुणोंको सेनामें सम्मिलित होनेको प्रोत्साहित करता था। उसके गीतोंका यह प्रभाव हुआ कि महाराणाकी सेना दुगुनी हो गयी।

एक दिन जब प्रताप किसी पासकी बस्तीमें सितार बजाकर गीत सुना रहा था, एक मुगल-सैनिकने छिपकर उसका गीत सुन लिया। जब प्रताप लौटने लगा, तब उस सैनिकने प्रतापको पकड़ लिया और सेनापतिके पास ले आया। मुगल सेनापति प्रतापको देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने कहा—'लड़के! तुम्हें हमारे लिये गीत सुनाना होगा।'

प्रतापने कहा—'मेरा काम ही गीत सुनाना है। आप जब कहें, मैं गानेको तैयार हूँ।' मुगल सेनापतिने रातको सेना सजायी। चित्तौड़के किलेके पास वह सेनाके साथ आया। किलेके दरवाजेपर प्रतापको खड़ा करके उसने कहा—'अब तुम अपने गीत गाओ।'

मुगल सेनापतिने सोचा था कि प्रतापके गीत सुनकर किलेकें भीतरके लोग समझेंगे कि उनकी सहायताके लिये कोई दूसरी राजपूत सेना आयी है। इस धोखेमें वे किलेका फाटक खोल देंगे। प्रताप मुगल सेनापतिकी चालाकी समझ गया। उसने ऐसा गीत गाना प्रारम्भ किया कि उसे सुनकर किलेके राजपूत सावधान हो गये। उन्होंने मुगल-सेनापर पत्थरों और तीरोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी। बहुत-से मुगल सैनिक मारे गये। मुगल सेनापतिने डाँटते हुए प्रतापसे पूछा—'लड़के! तू क्या गा रहा है?'

प्रतापने बड़ी निर्भयतासे कहा—'मैं गीतमें अपने वीरोंसे कह रहा हूँ कि शत्रु द्वारपर खड़ा है। सोओ मत। धोखेमें मत आओ! किला मत खोलो! पत्थर मारो, पत्थर! शत्रुका कचूमर निकाल दो।'

मुगल सेनापतिने प्रतापका सिर एक झटकेमें काट दिया; किंतु राजपूत सावधान हो गये थे, मुगल-सेनाको निराश होकर लौट जाना पड़ा। दूसरे दिन राजपूतोंको प्रतापकी लाश मिली। देशपर प्राण देनेवाले उस वीर बालककी देहको स्वयं महाराणा-ने अपने हाथों चितापर रक्खा।

वीर बालक रामसिंह

राठौर वीर अमरसिंह अपनी तेजस्विताके लिये प्रसिद्ध हैं। वे शाहजहाँ बादशाहके दरबारमें एक ऊँचे पदपर थे। एक दिन बादशाहके साले सलावतखाँने उनका अपमान कर दिया। भरे दरबारमें अमरसिंहने सलावतखाँका सिर काट फेंका। किसीकी हिम्मत नहीं हुई कि अमरसिंहको रोके या उनसे कुछ कहे। मुसल्मान दरबारी जान लेकर इधर-उधर भागने लगे। अमरसिंह अपने घर लौट आये।

अमरसिंहके सालेका नाम था अर्जुन गौड़। वह बहुत लोभी और नीच स्वभावका था। बादशाहने उसे लालच दिया। उसने अमरसिंहको समझाया-बुझाया और धोखा देकर बादशाहके महलमें ले गया। वहाँ जब अमरसिंह एक छोटे दरवाजेमें होकर भीतर जा रहे थे, अर्जुन गौड़ने पीछेसे वार करके उन्हें मार दिया। बादशाह शाहजहाँ इस समाचारसे बहुत प्रसन्न हुआ। उसने अमरसिंहकी लाशको किलेकी बुर्जपर डलवा दिया। एक विख्यात वीरकी लाश इस प्रकार चील-कौवेको खानेके लिये डाल दी गयी!

अमरसिंहकी रानीने समाचार सुना तो सती होनेका निश्चय कर लिया, लेकिन पतिकी लाशके बिना वह सती कैसे होती। महलमें जो थोड़े-बहुत राजपूत सैनिक थे, उनको उसने अपने पतिकी लाश लेने भेजा, किंतु बादशाहकी सेनाके आगे वे थोड़े-से वीर क्या कर सकते

थे। रानीने बहुत-से सरदारोंसे प्रार्थना की, परंतु कोई भी बादशाहसे शत्रुता लेनेका साहस नहीं कर सकता था। अन्तमें रानीने तलवार मँगायी और स्वयं अपने पतिका शव लानेको तैयार हो गयी।

इसी समय अमरसिंहका भतीजा रामसिंह नंगी तलवार लिये वहाँ आया। उसने कहा—'चाची! तुम अभी रुको। मैं जाता हूँ या तो चाचाकी लाश ले आऊँगा या मेरी लाश भी वहीं गिरेगी।'

रामसिंह अमरसिंहके बड़े भाई जसवन्तसिंहका पुत्र था। वह अभी नवयुवक ही था। सती रानीने उसे आशीर्वाद दिया। पंद्रह वर्षका वह राजपूत वीर घोड़ेपर सवार हुआ और घोड़ा दौड़ाता सीधे बादशाहके महलमें पहुँच गया। महलका फाटक खुला था। द्वारपाल रामसिंहको पहचान भी नहीं पाये कि वह भीतर चला गया, लेकिन बुर्जके नीचे पहुँचते-पहुँचते सैकड़ों मुसल्मान सैनिकोंने उसे घेर लिया। रामसिंह-को अपने मरने-जीनेकी चिन्ता नहीं थी। उसने मुखमें घोड़ेकी लगाम पकड़ रक्खी थी। दोनों हाथोंसे तलवार चला रहा था। उसका पूरा शरीर रक्तसे लथपथ हो रहा था।

सैकड़ों नहीं, हजारों मुसल्मान सैनिक थे। उनकी लाशें गिरती थीं और उन लाशोंपरसे रामसिंह आगे बढ़ता जा रहा था। वह मुर्दोंकी छातीपर होता बुर्जपर चढ़ गया। अमर-सिंहकी लाश उठाकर उसने कंधेपर रक्खी और एक हाथसे

तलवार चलाता नीचे उतर आया। घोड़ेपर लाशको रखकर वह बैठ गया। बुर्जके नीचे मुसलमानोंकी और सेना आनेके पहिले ही रामसिंहका घोड़ा किलेके फाटकके बाहर पहुँच चुका था।

रानी अपने भतीजेका रास्ता देखती खड़ी थीं। पतिकी लाश पाकर उन्होंने चिता बनायी। चितापर बैठी सतीने रामसिंहको आशीर्वाद दिया—'बेटा! गौ, ब्राह्मण, धर्म और सती स्त्रीकी रक्षाके लिये जो संकट उठाता है, भगवान् उसपर प्रसन्न होते हैं। तूने आज मेरी प्रतिष्ठा रक्खी है। तेरा यश संसारमें सदा अमर रहेगा।'

थे। रानीने बहुत-से सरदारोंसे प्रार्थना की, परंतु कोई भी बादशाहसे शत्रुता लेनेका साहस नहीं कर सकता था। अन्तमें रानीने तलवार मँगायी और स्वयं अपने पतिका शव लानेको तैयार हो गयी।

इसी समय अमरसिंहका भतीजा रामसिंह नंगी तलवार लिये वहाँ आया। उसने कहा—'चाची! तुम अभी रुको। मैं जाता हूँ या तो चाचाकी लाश ले आऊँगा या मेरी लाश भी वहीं गिरेगी।'

रामसिंह अमरसिंहके बड़े भाई जसवन्तसिंहका पुत्र था। वह अभी नवयुवक ही था। सती रानीने उसे आशीर्वाद दिया। पंद्रह वर्षका वह राजपूत वीर घोड़ेपर सवार हुआ और घोड़ा दौड़ाता सीधे बादशाहके महलमें पहुँच गया। महलका फाटक खुला था। द्वारपाल रामसिंहको पहचान भी नहीं पाये कि वह भीतर चला गया, लेकिन बुर्जके नीचे पहुँचते-पहुँचते सैकड़ों मुसल्मान सैनिकोंने उसे घेर लिया। रामसिंह-को अपने मरने-जीनेकी चिन्ता नहीं थी। उसने मुखमें घोड़ेकी लगाम पकड़ रक्खी थी। दोनों हाथोंसे तलवार चला रहा था। उसका पूरा शरीर रक्तसे लथपथ हो रहा था।

सैकड़ों नहीं, हजारों मुसल्मान सैनिक थे। उनकी लाशें गिरती थीं और उन लाशोंपरसे रामसिंह आगे बढ़ता जा रहा था। वह मुर्दोंकी छातीपर होता बुर्जपर चढ़ गया। अमर-सिंहकी लाश उठाकर उसने कंधेपर रक्खी और एक हाथसे

तलवार चलाता नीचे उतर आया। घोड़ेपर लाशको रखकर वह वैठ गया। बुर्जके नीचे मुसल्मानोंकी और सेना आनेके पहिले ही रामसिंहका घोड़ा किलेके फाटकके वाहर पहुँच चुका था।

रानी अपने भतीजेका रास्ता देखती खड़ी थीं। पतिकी लाश पाकर उन्होंने चिता वनायी। चितापर वैठी सतीने रामसिंहको आशीर्वाद दिया—'वेटा! गौ, ब्राह्मण, धर्म और सती स्त्रीकी रक्षाके लिये जो संकट उठाता है, भगवान् उसपर प्रसन्न होते हैं। तूने आज मेरी प्रतिष्ठा रक्खी है। तेरा यश संसारमें सदा अमर रहेगा।'

वीर निर्भीक बालक शिवाजी

आगे चलकर जिसे हिंदू-धर्मका संरक्षक छत्रपति होना था, उसके शैशवमें ही उसकी शिक्षा प्रारम्भ हो गयी थी। कठिनाइयाँ जीवनका निर्माण करती हैं और शिवाजीका बाल्य-काल बहुत बड़ी कठिनाइयोंमें बीता। शिवनेरके किलेमें सन् १६३० ई० में उनका जन्म हुआ था। उनके पिता शाहजी बीजापुर-दरबारमें नौकर थे। बीजापुरके नवाबकी ओरसे, जब कि शाहजी अहमदनगरकी लड़ाईमें फँसे थे, मालदार खानने दिल्लीके बादशाहको प्रसन्न करनेके लिये बालक शिवाजी तथा उनकी माता जीजाबाईको सिंहगढ़के किलेमें बंदी करनेका प्रयत्न किया, लेकिन उसका यह दुष्ट प्रयत्न सफल नहीं हो सका। शिवाजीके बचपनके तीन वर्ष अपने जन्म-स्थान शिवनेरके किलेमें ही बीते। इसके बाद जीजाबाईको शत्रुओंके भयसे अपने बालकके साथ एक किलेसे दूसरे किलेमें बराबर भागते रहना पड़ा; किंतु इस कठिन परिस्थितिमें भी उन वीर माताने अपने पुत्रकी सैनिक-शिक्षामें त्रुटि नहीं आने दी।

माता जीजाबाई शिवाजीको रामायण, महाभारत तथा

पुराणोंकी वीर-गाथाएँ सुनाया करती थीं। नारो, त्रीमल, हनुमन्त तथा गोमाजी नायक शिवाजीके शिक्षक थे और शिवाजीके संरक्षक थे प्रचण्ड वीर दादाजी कोंडदेव। इस शिक्षाका परिणाम यह हुआ कि बालक शिवाजी बहुत छोटी अवस्थामें ही निर्भीक एवं अदम्य हो गये। जन्मजात शूर मावली बालकोंकी टोली बनाकर वे उनका नेतृत्व करते थे और युद्धके खेल खेला करते थे। उन्होंने बचपनमें ही विधर्मियोंसे हिंदूधर्म, देवमन्दिर तथा गौओंकी रक्षा करनेका दृढ़ संकल्प कर लिया।

शाहजी चाहते थे कि उनका पुत्र भी बीजापुर-दरबारका कृपापात्र बने। शिवाजी जब आठ वर्षके थे, तभी उनके पिता एक दिन उन्हें शाही दरबारमें ले गये। पिताने सोचा था कि दरबारकी साज-सज्जा, रोब-दाब, हाथी-घोड़े आदि देखकर बालक रोबमें आ जायगा और दरबारकी ओर आकर्षित होगा; किंतु शिवाजी तो बिना किसी ओर देखे, बिना किसी ओर ध्यान दिये, पिताके साथ ऐसे चलते गये, जैसे किसी साधारण मार्गपर जा रहे हों। नवाबके सामने पहुँचकर पिताने शिवाजीकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—'बेटा! बादशाहको सलाम करो।'

बालकने मुड़कर पिताकी ओर देखा और बोला—'बादशाह मेरे राजा नहीं हैं। मैं इनके आगे सिर नहीं झुका सकता।'

दरबारमें सनसनी फैल गयी। नवाब बालककी ओर घूरकर देखने लगा; किंतु शिवाजीने नेत्र नहीं झुकाये। शाहजीने

सहमते हुए प्रार्थना की—'शाहनशाह! क्षमा करें। यह अभी बहुत नादान है।' पुत्रको उन्होंने घर जानेकी आज्ञा दे दी। बालकने पीठ फेरी और निर्भीकतापूर्वक दरबारसे चला आया। घर लौटकर शाहजीने जब पुत्रको उसकी धृष्टताके लिये डाँटा, तब पुत्रने उत्तर दिया—'पिताजी! आप मुझे वहाँ क्यों ले गये थे? आप तो जानते ही हैं कि मेरा मस्तक तुलजा भवानी और आपको छोड़कर और किसीके सामने झुक नहीं सकता।' शाहजी चुप हो रहे।

इस घटनाके चार वर्ष पीछेकी एक घटना है। उस समय शिवाजीकी अवस्था बारह वर्षकी थी। एक दिन बालक शिवाजी बीजापुरके मुख्य मार्गपर घूम रहे थे। उन्होंने देखा कि एक कसाई एक गायको रस्सीसे बाँधे लिये जा रहा है। गाय आगे जाना नहीं चाहती, डकराती है और इधर-उधर कातर नेत्रोंसे देखती है। कसाई उसे डंडेसे बार-बार पीट रहा है। इधर-उधर दूकानोंपर जो हिंदू हैं, वे मस्तक झुकाये यह सब देख रहे हैं। उनमें इतना साहस नहीं कि कुछ कह सकें। मुसल्मानी राज्यमें रहकर वे कुछ बोलें तो पता नहीं क्या हो। लेकिन लोगोंकी दृष्टि आश्चर्यसे खुली-की-खुली रह गयी। बालक शिवाकी तलवार म्यानसे निकलकर चमकी, वे कूदकर कसाईके पास पहुँचे और गायकी रस्सी उन्होंने काट दी। गाय भाग गयी एक ओर। कसाई कुछ बोले—इससे पहले तो उसका सिर धड़से कटकर भूमिपर लुढ़कने लगा था।

समाचार दरबारमें पहुँचा । नवाबने क्रोधसे लाल होकर कहा—'तुम्हारा पुत्र बड़ा उपद्रवी जान पड़ता है शाहजी ! तुम उसे तुरंत बीजापुरसे बाहर कहीं भेज दो ।'

शाहजीने आज्ञा स्वीकार कर ली । शिवाजी अपनी माताके पास भेज दिये गये, लेकिन अन्तमें एक दिन वह भी आया कि बीजापुर-नवाबने स्वतन्त्र हिंदूसम्राट्के नाते शिवाजीको अपने राज्यमें निमन्त्रित किया और जब शिवाजी हाथीपर होकर बीजापुरके मार्गोंसे होते दरबारमें पहुँचे, तब नवाबने आगे आकर उनका स्वागत किया और उनके सामने मस्तक झुकाया ।

वीर बालक छत्रसाल

पन्नानरेश महाराज चम्पतराव बड़े ही धर्मनिष्ठ एवं स्वाभिमानी थे। इन्हींके यहाँ ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया वि० सं० १७०६ को बालक छत्रसालका मोर पहाड़ीके जंगलमें जन्म हुआ था। मुगल-सम्राट् शाहजहाँकी सेना चारों ओरसे घेरा डालनेके प्रयत्नमें थी। छिपे रहना आवश्यक समझकर पुत्रके जन्मपर भी महाराजने कोई उत्सव नहीं मनाया था। एक बार तो शत्रु इतने निकट आ गये कि लोगोंको प्राण बचानेके लिये इधर-उधर छिपनेके लिये भागना पड़ा। इस भाग-दौड़में शिशु छत्रसाल अकेले ही मैदानमें छूट गये; किंतु—

> जाको राखै साइयाँ मार सकै नहिं कोय।
> बाल न बाँका करि सकै जौ जग बैरी होय॥

बालक छत्रसालपर शत्रुओंकी दृष्टि नहीं पड़ी। भगवान्‌ने शिशुकी रक्षा कर ली। चार वर्षकी अवस्थातक इन्हें ननिहालमें रहना पड़ा और फिर केवल सात वर्षकी अवस्थातक पिताके साथ रह सके। पाँच वर्षकी अवस्थामें श्रीरामजीके मन्दिरमें इन्होंने भगवान् राम-लक्ष्मणकी मूर्तियोंको अपने-जैसा बालक समझकर उनके साथ खेलना चाहा और कहते हैं सचमुच भगवान् इनके साथ खेले। पिताकी मृत्युके पश्चात् तेरह वर्षकी अवस्थातक छत्रसालको ननिहालमें रहना पड़ा। इसके बाद वे पन्ना चले आये और चाचा सुजानरावने बड़ी सावधानीसे उन्हें सैनिक शिक्षा दी। अपने पिताका शौर्य छत्रसालको

पैतृक सम्पत्तिके रूपमें प्राप्त हुआ था। अपने जीवनमें उन्होंने पिताके संकल्पको पूर्ण किया। पन्नाराज्य छत्रसालको पाकर धन्य हो गया।

देहलीके सिंहासनपर औरंगजेब बैठ चुका था। उसके अन्यायका दौरा सारे देशको आतंकित कर रहा था। छत्रसालकी अवस्था उस समय लगभग १३-१४ वर्षकी थी। विन्ध्यवासिनी देवीके मन्दिरमें मेला था। चारों ओर चहल-पहल थी। दूर-दूरसे लोग भगवतीके दर्शन करने चले आ रहे थे। महाराज चम्पतराव बुन्देले सरदारोंके साथ वार्तालाप करनेमें लगे थे। युवराज छत्रसालने जूते उतारे, हाथ-पैर धोये और एक डलिया लेकर देवीकी पूजा करनेके लिये पुष्प चुनने वे वाटिकामें पहुँचे। उनके साथ उसी अवस्थाके दूसरे राजपूत बालक भी थे। पुष्प चुनते हुए वे कुछ दूर निकल गये। इतनेमें वहाँ कुछ मुसलमान सैनिक घोड़ोंपर चढ़े आये। पास आकर वे घोड़ोंसे उतर पड़े और पूछने लगे—'विन्ध्यवासिनीका मन्दिर किधर है?'

छत्रसालने पूछा—'क्यों, तुम्हें भी क्या देवीकी पूजा करनी है?'

मुसलमान सरदारने कहा—'छिः! हम तो मन्दिरको तोड़ने आये हैं।'

छत्रसालने फूलोंकी डलिया दूसरे बालकको पकड़ायी और गर्ज उठे—'मुँह सम्हालकर बोल! फिर ऐसी बात कही तो जीभ खींच लूँगा।'

सरदार हँसा और बोला—'तू भला क्या कर सकता है। तेरी देवी भी……।' लेकिन बेचारेका वाक्य पूरा नहीं हुआ। छत्रसालकी तलवार उसकी छातीमें होकर पीछेतक

निकल गयी थी। एक युद्ध छिड़ गया उस पुष्प-वाटिकामें। जिन बालकोंके पास तलवारें नहीं थीं, वे तलवारें लेने दौड़ गये।

मन्दिरमें इस युद्धका समाचार पहुँचा। राजपूतोंने कवच पहने और तलवार सम्हाली; किंतु उन्होंने देखा कि युवराज छत्रसाल एक हाथमें रक्तसे भीगी तलवार तथा दूसरेमें फूलोंकी डलिया लिये हँसते हुए चले आ रहे हैं। उनके वस्त्र रक्तसे लाल हो रहे हैं। अकेले युवराजने शत्रुसैनिकोंको भूमिपर सुला दिया था। महाराज चम्पतरावने पुत्रको हृदयसे लगा लिया। भगवती विन्ध्यवासिनी अपने सच्चे पुजारीके आजके शौर्य-पुष्प पाकर प्रसन्न हो गयीं।

वीर बालक दुर्गादास राठौर

जोधपुरनरेश महाराज यशवंतसिंहजीके पास उनकी
ाँड़िनियों (ऊँटनियों) के रक्षकने यह सूचना पहुँचायी कि
क साधारण किसानके लड़केने एक साँड़िनीको मार डाला
। महाराजने उस किसानको पकड़कर लानेको कहा।
ःसानका नाम था आसकरण। वह राठौर राजपूत था।
हाराजके सामने आनेपर उसने अपने बालकको आगे करके
हा—'श्रीमान्‌का अपराधी यही है।'

महाराजने क्रोधसे डाँटकर पूछा—'तुमने साँड़िनी मारी?'

बालकने निर्भयतापूर्वक स्वीकार कर लिया। पूछनेपर
सने कहा—'मैं अपने खेतकी रक्षा कर रहा था। साँड़िनियों-
ो आते देखकर मैंने आगे दौड़कर चरवाहेको मना किया,
ंतु उसने मेरी बातपर ध्यान ही नहीं दिया। हमारी फसल
ट हो जाय तो हम खायँगे क्या? इसलिये जब एक साँड़िनीने
रे खेतमें मुख डाला, तब मैंने उसे मार दिया। दूसरी
ाँड़िनियाँ और चरवाहा भी भाग गया।'

एक छोटा-सा बालक एक मजबूत ऊँटको मार सकता
, यह बात मनमें जमती नहीं थी। महाराजने पूछा—'तुमने
ाँड़िनी मारी कैसे?'

बालकने इधर-उधर देखा। एक परवालिया ऊँट सामनेसे
ा रहा था। वह उस ऊँटके पास गया और कमरसे तलवार

ांचकर उसने ऐसा हाथ मारा कि ऊँटकी गर्दन उड़ गयी। सका सिर गिर पड़ा। महाराज उस बालककी वीरतापर हुत प्रसन्न हुए। उसे उन्होंने अपने पास रख लिया। यही ालक इतिहासप्रसिद्ध वीर दुर्गादास हुए। औरंगजेब-जैसे ूर बादशाहसे इन्होंने यशवंतसिंहकी रानी तथा राजकुमार ग़जीतसिंहकी रक्षा की। मारवाड़ राज्यका यवनोंके पंजेसे न्होंने ही उद्धार किया।

वीर बालक पुत्त

एक समय दिल्लीका मुगल बादशाह अकबर बहुत बड़ी सेना लेकर चित्तौड़ जीतने आया। चित्तौड़के राणा उदयसिंह यह देखकर डरके मारे चित्तौड़ छोड़कर दूसरी जगह भाग गये और उनका सेनापति जयमल शहरकी रक्षा करने लगा पर एक रातको दूरसे अकबरशाहने उसे गोलीसे मार डाला। चित्तौड़निवासी अब एकदम घबरा उठे, पर इतनेमें ही चित्तौड़का एक बहादुर लड़का स्वदेशकी रक्षाके लिये मैदानमें आ गया।

उस वीर बालकका नाम था पुत्त। उसकी उम्र केवल सोलह वर्षकी थी। पुत्त था तो बालक, पर बड़े-बड़े बहादुर आदमियोंके समान वह बड़ा साहसी और बलवान् था। उसकी माता, बहिन और स्त्रीने युद्धमें जानेके लिये उसे खुशीसे आज्ञा दे दी। यही नहीं, वे भी उस समय घरमें न बैठकर हथियार लेकर अपने देशकी रक्षा करनेके लिये बड़े उत्साहके साथ युद्धभूमिमें जा पहुँचीं।

अकबरकी सेना दो भागोंमें बँटी थी। एक भाग पुत्तके सामने लड़ता था और दूसरा भाग दूसरी ओरसे पुत्तको रोकनेके लिये आ रहा था। यह दूसरे भागकी सेना पुत्तकी मा, पत्नी और बहिनका पराक्रम देखकर चकित हो गयी। दोपहरके दो बजते-बजते पुत्त उनके पास पहुँचा; देखता क्या है कि

बहिन लड़ाईमें मर चुकी है, माता और स्त्री बंदूककी गोली खाकर जमीनपर तड़फड़ा रही है। पुत्तको पास देखकर माताने कहा—'बेटा! हम स्वर्गमें जा रही हैं, तू लड़ाई करने जा। लड़कर जन्मभूमिकी रक्षा कर या मरकर स्वर्गमें आकर

हमसे मिलना।' इतना कहकर पुत्तकी माने प्राण छोड़ दिये। पुत्तकी पत्नीने भी स्वामीकी ओर धीर भावसे एकटक देखते हुए प्राणत्याग किया। पुत्त अब विशेष उत्साह और वीरतासे फिर शत्रुसेनाका मुकाबला करने लगा। माताकी मरते समयकी आज्ञा पालन करनेमें उसने तनिक भी पैर पीछा नहीं किया और जन्मभूमिके लिये लड़ते-लड़ते प्राण त्याग दिये। इस प्रकार इस एक ही घरके चार वीर नर-नारी स्वर्ग पधारे और उनकी कीर्ति सदाके लिये इस संसारमें कायम रह गयी।

वीर बालक अजीतसिंह और जुझारसिंह

गुरु गोविन्दसिंह आनन्दपुरके किलेमें थे। उनके साथ जितने सिख-सैनिक थे, उससे लगभग वीस गुनी बड़ी मुसल्मानी सेनाने किलेको घेर रखा था। किलेमें जो भोजन-सामग्री थी, वह समाप्त होने लगी। सिख-सेनाके सरदारोंने गुरुजीपर बार-बार दबाव डालना प्रारम्भ किया—'आप बच्चोंके साथ चुपचाप यहाँसे निकल जायँ। देशको एवं जातिको विधर्मियोंके अत्याचारसे बचानेके लिये आपको बचे रहना चाहिये।'

अपने साथियोंके बहुत हठ करनेपर एक दिन आधी रातको गुरुजी अपनी माता, पत्नी तथा चार पुत्रोंके साथ चुपचाप किलेसे निकल पड़े। लेकिन वे सुरक्षित दूर नहीं जा सके थे कि मुसल्मान-सेनाको पता लग गया। शत्रुसेना-के घुड़सवार और पैदल सैनिक मशालें ले-लेकर इधरसे उधर दौड़ने लगे। उन लोगोंकी दौड़-धूपका यह परिणाम हुआ कि गुरु गोविन्दसिंहजी, उनकी पत्नी, दो पुत्र अजीतसिंह और जुझारसिंह एक ओर हो गये और गुरुजीकी माता तथा दो छोटे पुत्र जोरावरसिंह और फतहसिंह दूसरी ओर हो गये।

गुरुजी सुरक्षित निकल जायँ इसलिये किलेमें जो सिख
सैनिक थे, उन्होंने किलेसे निकलकर मुसलमान-सेना
आक्रमण कर दिया। रातके अँधेरेमें भयंकर युद्ध प्रारम्भ
गया। थोड़े-से सिख-सैनिक प्राणपणसे जूझ रहे थे। लेकि
मुसलमान-सैनिक गुरुजीका भी पीछा कर रहे थे। गुरुजी
साथ जो सैनिक थे, वे शत्रुसे लड़ते-लड़ते समाप्त हो गये थे
गुरुदेवके बड़े पुत्र अजीतसिंहसे यह देखा नहीं गया।
पिताके पास आये और प्रणाम करके बोले—'पिताजी! हम
सैनिक हमलोगोंकी रक्षाके लिये प्राण दे रहे हैं। ऐसी दश
में मैं उन्हें मृत्युके मुखमें झोंककर भागना नहीं चाहता। अ
मुझे युद्ध करनेकी आज्ञा दें।'

पुत्रकी बात सुनकर गुरुजीने उन्हें हृदयसे लगा
और कहा—'बेटा! धन्य हो तुम। अपने देश और धर्मके लि
मर-मिटनेवाले ही अमर हैं। तुम अपने कर्तव्यका पालन करो

अजीतसिंह आठ-दस सिख-सैनिकोंके साथ शत्रुके द
पर टूट पड़े। उनका आक्रमण शत्रुके लिये साक्षात् यमराज
आक्रमणके समान भयंकर सिद्ध हुआ। लेकिन बहुत ब
सेनाके सामने दस-ग्यारह मनुष्य क्या कर सकते थे। सैक
शत्रुओंको सुलाकर उन्होंने भी वीरोंकी गति प्राप्त की
बड़े भाईके युद्धमें गिर जानेपर उनसे छोटे जुझारसिंह
गुरुजीको प्रणाम करके कहा—'पिताजी! मुझे आज्ञा दीजि
ताकि मैं भी अपने बड़े भाईका अनुगामी बन सकूँ।'

धन्य हैं वे पुत्र जो इस प्रकार देश और धर्मपर मरनेको उत्सुक होते हैं और धन्य हैं वे पिता जो अपने पुत्रोंको इस प्रकार आत्मबलि देनेका प्रसन्नतासे आशीर्वाद देते हैं। गुरुजीने जोरावरसिंहको आशीर्वाद दिया—'जाओ पुत्र! देवता तुम्हारी प्रतीक्षा करते हैं। अमरत्व प्राप्त करो।'

जुझारसिंह भी अपने थोड़े-से बचे हुए साथियोंके साथ टूट पड़े। थके, भूखे सिख-सैनिक और उनके नेता जुझारसिंह तो अभी बालक ही थे; किंतु जब वे शत्रुसे लड़ते-लड़ते युद्ध-भूमिमें गिरे, उस समयतक शत्रुके इतने सैनिक मारे जा चुके थे कि मुसल्मान-सेनाका साहस गुरुजीका पीछा करते आगे बढ़नेका नहीं हुआ।

वीर बालक पृथ्वीसिंह

दिल्लीके मुगल बादशाह औरंगजेबके यहाँ उसके शिकारी ंगलसे पकड़कर एक बड़ा भारी शेर ले आये थे। शेर लोहेके ांजड़ेमें बंद था और बार-बार दहाड़ रहा था। बादशाह हता था—'इससे बड़ा और भयानक शेर दूसरा नहीं मल सकता।'

बादशाहके दरबारियोंने उसकी हाँ-में-हाँ मिलायी, लेकिन हाराज यशवन्तसिंहजीने कहा—'इससे भी अधिक शक्तिशाली ार मेरे पास है।' बादशाहको बहुत क्रोध आया। उसने हा—'तुम अपने शेरको इससे लड़नेको छोड़ो। यदि तुम्हारा ार हार गया तो तुम्हारा सिर काट लिया जायगा।' यशवन्त-ंहने बादशाहकी यह बात स्वीकार कर ली।

दूसरे दिन दिल्लीके किलेके सामनेके मैदानमें लोहेके ाटे छड़ोंका बड़ा भारी पींजड़ा दो शेरोंकी लड़ाईके लिये खा गया। शेरोंका युद्ध देखने बहुत बड़ी भीड़ वहाँ इकट्ठी

हो गयी। औरंगजेब बादशाह भी ठीक समयपर आकर अपने सिंहासनपर बैठ गया। राजा यशवन्तसिंह अपने दस वर्षके पुत्र पृथ्वीसिंहके साथ आये। उन्हें देखकर बादशाहने पूछा—'आपका शेर कहाँ है?'

यशवन्तसिंह बोले—'मैं अपना शेर अपने साथ लाया हूँ। आप लड़ाई आरम्भ होनेकी आज्ञा दीजिये।'

बादशाहकी आज्ञासे वह जंगली शेर अपने पींजड़ेसे लड़ाईके लिये बनाये गये बड़े पींजड़ेमें छोड़ दिया गया। यशवन्तसिंहने अपने पुत्रको उस पींजड़ेमें घुस जानेको कहा। बादशाह और वहाँके सब लोग हक्के-बक्के-से रह गये; किंतु दस वर्षका बालक पृथ्वीसिंह पिताको प्रणाम करके हँसते-हँसते शेरके पींजड़ेमें घुस गया।

शेरने पृथ्वीसिंहकी ओर देखा। उस तेजस्वी बालकके नेत्रोंको देखते ही एक बार वह पूँछ दबाकर पीछे हट गया, लेकिन शिकारियोंने बाहरसे भालेकी नोकसे ठेलकर उसे उकसाया। वह शेर क्रोधमें दहाड़ मारकर पृथ्वीसिंहपर कूद पड़ा। बालक पृथ्वीसिंह झटसे एक ओर हट गया और उसने अपनी तलवार खींच ली।

पुत्रको तलवार निकालते देखकर यशवन्तसिंहने पुकारा—'बेटा! तू यह क्या करता है? शेरके पास तो तलवार है नहीं, फिर तू उसपर क्या तलवार चलावेगा? यह तो धर्मयुद्ध नहीं है।'

पिताकी बात सुनकर पृथ्वीसिंहने तलवार फेंक दी और

ह शेरपर टूट पड़ा। उस छोटे बालकने शेरका जबड़ा पकड़कर फाड़ दिया और फिर शेरके पूरे शरीरको चीरकर दो टुकड़े करके फेंक दिया।

वहाँकी सारी भीड़ पृथ्वीसिंहका जय-जयकार करने लगी। शेरके खूनसे सना पृथ्वीसिंह जब पींजड़ेसे निकला तो यशवन्तसिंहने दौड़कर उसे छातीसे लगा लिया।
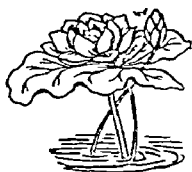
वीर बालक जालिमसिंह

मुर्शिदाबादमें नवाब सरफराज खाँकी अमलदारी थी। उन दिनोंकी यह बात है। वह जनताका प्रेम प्राप्त नहीं कर सके थे। इससे उनके विरुद्ध एक षड्यन्त्र रचा गया।

षड्यन्त्र रचनेवाला अलीवर्दी खाँ था। एक बड़ी सेना लेकर वह उसके मुकाबले गया। सरफराज खाँ घबरा गया, परंतु अब लड़नेके सिवा छुटकारा न था।

दोनों सेनाएँ गिरियाके प्रसिद्ध मैदानमें पड़ाव डाले पड़ी थीं। बीचमें कलकल-ध्वनि करती भागीरथी गङ्गा नदी बह रही थी। दोनों किनारे तंबू खड़े थे। उन तंबुओंकी सफेद परछाईं भागीरथीके जलमें पड़कर सुन्दर छटा दिखला रही थी।

रात बीत गयी। सवेरा हुआ। चारों ओर उजाला हो गया। सूरज उगनेके पहले ही लड़ाईका बाजा बज गया। सैनिक लड़ाईके मैदानमें आकर खड़े हो गये और लड़ाई होने लगी।

सरफराज खाँ हाथीपर बैठा था। उसका प्रधान सेना-

पति मारा गया था। इससे वह वीरतापूर्वक लड़ाईमें आगे बढ़ता जाता था। इतनेमें उसे गोली लगी और वह गिर पड़ा। मुर्शिदाबादके नवाबकी सेनामें केवल सरफराज खाँने ही प्राणोंसे हाथ धोया।

विजयसिंह नामका एक राजपूत योद्धा था। सेनाके पिछले भागकी रक्षाका भार उसके ऊपर था। वह गिरियाके पास खमरा नामके स्थानमें था। उसने अपने मालिकके मरनेका समाचार सुना। तुरंत ही वह अलीवर्दी खाँके सामने झपटा। अपने मालिककी मौतसे राजपूत वीरका खून खौल उठा। उसने अपना एक भाला कसकर अलीवर्दी खाँके ऊपर फेंका, परंतु उसके पहले गोलंदाज सैनिकने एक गोली विजयसिंहको मारी। वह वहाँ ही ढेर हो गया। गिरियाके युद्धमें उसने अपना शरीर-त्याग किया।

विजयसिंहका एक पुत्र था, वह केवल नौ वर्षका था। उसका नाम था जालिमसिंह। वह भी इस लड़ाईमें अपने पिताके साथ था। जब विजयसिंह घोड़ेसे लुढ़ककर नीचे गिरा तो उसका पुत्र जालिमसिंह नंगी तलवार लेकर पिताके मृत देहकी रक्षा करनेके लिये दौड़ा। चारों ओर अलीवर्दी खाँकी सेना जय-जयकार कर रही थी। रणभेरीकी ध्वनिसे दिशाएँ कम्पायमान हो रही थीं, परंतु वह नौ वर्षका बालक जरा भी नहीं सहमा।

अपनी छोटी-सी तलवार लेकर सिंह-शावकके समान
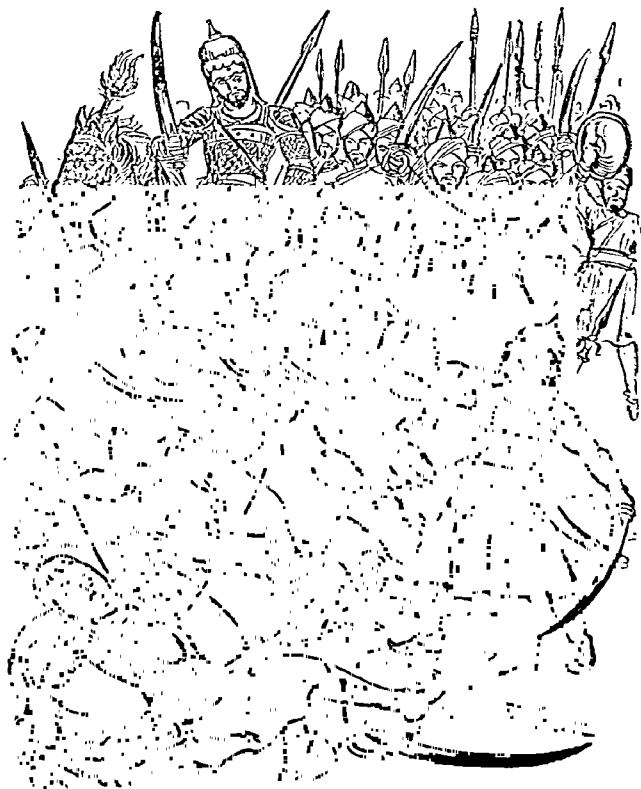
गरजने लगा । पिताके शरीरको मुसलमान स्पर्श न करे, इसलिये अपने प्राणोंकी परवा न करके निर्भय होकर वह लड़ाई-में जूझ रहा था । दुश्मनोंने उसे चारों ओरसे घेर लिया था,

परंतु वह वीर बालक तनिक न डिगा। अपनी नन्ही तलवार चारों ओर चलाने लगा। अलीवर्दी खाँ खुद ही वहाँ हाजिर था। बालकके अद्भुत साहस और पितृभक्तिको देखकर वह दंग हो गया। उसने सैनिकोंको विजयसिंहके मृत देहका योग्य दाह-संस्कार करानेका हुक्म दिया।

सैनिक बालककी वीरतापर प्रसन्न होकर उसे कंधेपर बैठाकर ले गये। बालकने भागीरथीके तटपर दाह-संस्कार करके पिताकी पवित्र राखको गङ्गाजीमें बहा दिया।

पवित्र भागीरथी उस पवित्र राखको अपनी छातीपर रखकर कलकल-ध्वनिसे बह रही थी और बालक वहाँसे उदास होकर तंबूमें लौट आया।

मुर्शिदाबादके इतिहासमें गिरियाकी लड़ाई बहुत प्रसिद्ध है। राजपूत बालक जालिमसिंहकी अद्भुत कथाने लड़ाईको अधिक प्रसिद्ध कर दिया है।

जिस जगह वीर बालकने अपनी वीरता दिखलायी थी वह आज भी जालिमसिंहके माठके नामसे विख्यात है।
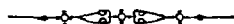
वीर बालक जेरापुर-नरेश

हैदराबाद राज्यके पास जेरापुर नामकी एक छोटी-सी हिंदू रियासत थी। सन् १८५७ के विद्रोहमें वहाँके राजाने अंग्रेजोंसे लड़नेके लिये अरब और रोहिला-पठानोंकी एक सेना जुटायी, लेकिन वह राजा उस समय बालक ही था। उस समयके हैदराबाद निजामके मन्त्री सालारजंगने उसे धोखेसे गिरफ्तार कर लिया और अंग्रेजोंको सौंप दिया।

कर्नल मेटोज टेलर नामके एक अंग्रेज अधिकारीसे इस राजाका बड़ा प्रेम था। राजा उन्हें 'अप्पा' कहा करता था। कर्नल टेलर राजासे जेलखानेमें मिलने गये और बालक समझकर उन्हें फुसलाने लगे—'यदि तुम दूसरे विद्रोह करनेवालोंका नाम बता दोगे तो तुम्हें क्षमा कर दिया जायगा।'

लेकिन सच्चे और बहादुर बालक अपने साथियोंसे विश्वासघात नहीं करते। राजाने हँसकर कहा—'अप्पा! मैं किसीके नाम नहीं बताऊँगा। अपने प्राण बचानेके लिये मैं अपने देशके भाइयोंको संकटमें नहीं डालूँगा। मैं तो आपलोगोंसे क्षमा भी नहीं माँगना चाहता। दूसरोंकी दयापर मुझे कायरके समान जीना अच्छा नहीं लगता।'

कर्नल टेलरने कहा—'तुम जानते हो कि तुम्हें प्राणदण्ड मिलेगा?' उस बालक राजाने कहा—'हाँ, मैं जानता हूँ, लेकिन

मेरी एक प्रार्थना मानो तो मुझे फाँसीपर मत चढ़ाना। मैं चोर नहीं हूँ। मुझे तोपसे उड़ा देना। तुम भी देखना कि मैं तोपके मुँहके सामने किस प्रकार शान्तिसे खड़ा रहता हूँ।

कर्नल टेलरके कहनेसे राजाको बालक समझकर कालेपानीकी सजा दी गयी। सजा सुनकर राजाने कहा--'जेल और कालेपानीकी सजा तो मेरे यहाँका एक कंगाल पहाड़ी भी पसंद नहीं करेगा, मैं तो राजा हूँ। कालेपानीके बदले मैं मृत्यु पसंद करता हूँ।' राजाने एक अंग्रेज पहरेदारके हाथसे झटककर पिस्तौल छीन ली और अपने ऊपर गोली

दाग दी। एक सुकुमार बालककी यह वीरता देखकर अंग्रेजोंको भी उसकी प्रशंसा करनी पड़ी।

देश-धर्मके रक्षणमें जो प्राणोंका देता बलिदान ।
स्वार्थ छोड़कर हँसते-हँसते जो कर देता त्याग महान ।।
सुखसे सब कुछ खोकर जो रख लेता देश-धर्मका मान ।
वही वीर आदर्श कहाता, गाते युग उसका गुणगान ।।

श्रीहरिः

बालकोंके लिये उपयोगी कुछ पुस्तकें

पिताकी सीख—लेखक—श्रीहनुमानप्रसादजी गोयल । विशेषकर बालकोंके लिये यह परम उपयोगी है । पृष्ठ १५२, मूल्य ··· |=)

बड़ोंके जीवनसे शिक्षा—पृष्ठ ११२, सुन्दर रंगीन टाइटल, मूल्य |=)

पढ़ो, समझो और करो—पृष्ठ १४८, सुन्दर मुखपृष्ठ, मूल्य ··· |=)

चोखी कहानियाँ—इस छोटी-सी पुस्तिकामें ३२ छोटी-छोटी कहानियाँ हैं । पृष्ठ ५२, सुन्दर बहुरंगा टाइटल, मूल्य ··· |-)

उपयोगी कहानियाँ—३५ बालकोपयोगी कहानियाँ, पृष्ठ-संख्या १०४, सुन्दर दोरंगा टाइटल, मूल्य ··· ··· |-)

भगवान श्रीकृष्ण [भाग १]—श्रीकृष्णकी मधुर तथा अद्भुत लीलाओंका मनोरञ्जक वर्णन । पृष्ठ-संख्या ६८, बारह सादे तथा एक बहुरंगा चित्र, तिरंगा आकर्षक मुखपृष्ठ, मूल्य ··· |-)

भगवान श्रीकृष्ण [भाग २]—कंस-वधके आगेकी लीलाओंका वर्णन । पृष्ठ-संख्या ६८, एक बहुरंगा तथा दस इकरंगे सुन्दर चित्र, तिरंगा मुखपृष्ठ, मूल्य ··· ··· |-)

भगवान राम [भाग १]—भगवान् श्रीरामके चरित्रोंको दो विभागोंमें विभक्त करके प्रकाशित किया गया है । यह उसीका पहला भाग है । पृष्ठ ५२, १ रंगीन, ७ एकरंगे चित्र, सुन्दर बहुरंगा टाइटल, मूल्य ··· ··· |)

भगवान राम [भाग २]—पृष्ठ ५२, १ रंगीन, ७ एकरंगे चित्र, सुन्दर बहुरंगा टाइटल, मूल्य ··· ··· |)

बालचित्र रामायण प्रथम भाग—चित्र ४८, मूल्य ··· |)

" द्वितीय भाग—चित्र ४८, मूल्य ··· |)

बाल-चित्रमय चैतन्यलीला—पृष्ठ ३६, मूल्य ··· |-)

बाल-चित्रमय बुद्धलीला—पृष्ठ ३६, मूल्य ··· |-)

बालचित्रमय कृष्णलीला (प्रथम भाग)—पृष्ठ ३६, मूल्य ··· |=)

" " (द्वितीय भाग)—पृष्ठ ३६, मूल्य ··· |=)

कविता और भजनोंकी पुस्तकें

१—**विनय-पत्रिका**—सानुवाद, पृष्ठ ४७२, सुनहरा चित्र१, मूल्य अजिल्द १), सजिल्द .... १।=)
२—**गीतावली**—सानुवाद, पृष्ठ ४४४, मूल्य १), सजिल्द १।=)
३—**सूर-विनय-पत्रिका**—सानुवाद, पृष्ठ-संख्या ३२८, मूल्य ।।।=) सजिल्द ... . १।)
४—**कवितावली**—सानुवाद, सचित्र, पृष्ठ २२४, मूल्य ॥-)
५—**दोहावली**—सानुवाद, सचित्र, पृष्ठ १९६, मूल्य ॥)
६—**भक्त-भारती**—सचित्र, पृष्ठ १२०, मूल्य .... ।≈)
७—**मनन-माला**—पृष्ठ ५६, मूल्य .... =)॥
८—**गीताभवन-दोहा-संग्रह**—पृष्ठ ४८, मूल्य .... =)
९—**वैराग्य-संदीपनी**—सटीक, सचित्र, पृष्ठ २४, मूल्य =)
१०—**भजन-संग्रह भाग १**—पृष्ठ १९२, मूल्य .... =)
११— ,, ,, २—पृष्ठ १६८, मूल्य .... =)
१२— ,, ,, ३—पृष्ठ २२८, मूल्य .... =)
१३— ,, ,, ४—पृष्ठ १६०, मूल्य .... =)
१४— ,, ,, ५—पृष्ठ १४०, मूल्य .... =)
१५—**हनुमानबाहुक**—पृष्ठ ४०, मूल्य .... -)॥
१६—**विनय-पत्रिकाके बीस पद**—सार्थ, पृष्ठ २४, मूल्य -)
१७—**हनुमानचालीसा**—पृष्ठ-संख्या ३२, मूल्य .... -)
१८—**हरेरामभजन**—२ माला, मूल्य ....)।।।
१९—**सीतारामभजन**—पृष्ठ ६४, मूल्य ....)॥
२०—**विनय-पत्रिकाके पंद्रह पद**—सार्थ, मूल्य ....)॥
२१—**श्रीहरिसंकीर्तन-धुन**—पृष्ठ ८, मूल्य ....)।
२२—**गजलगीता**—पृष्ठ ८, मूल्य .... आधा पैसा